बोलती लहरें

(धारावाहिक उपन्यास)

कुँअर माधवसिंह "दीपक" एम० ए०

शारदा मन्दिर
नई सड़क, दिल्ली

शारदा मन्दिर
नई सड़क, दिल्ली

१९५८
प्रथम वार २१००

मूल्य ३)

ग्रेट इण्डिया प्रेस
जी० बी० रोड, दि

परिचय

संध्या का समय था। गोमती के किनारे अनेक व्यक्ति सैर कर रहे थे। हम चार पाँच साथी एक ओर घूम रहे थे। कभी छतर मंजिल की ओर नज़र जाती थी—कभी गोमती की लहरों की ओर—कभी आने जाने वालों की ओर। छतर मंजिल के बड़े बड़े श्वेत विद्युत् दीप खूब चमक रहे थे। गोमती में उन का प्रतिबिम्ब काफी दूर तक झिलमिला रहा था। हमारे साथ दो युवतियाँ भी थीं। बात करते करते एक साथी ने कहा—"भाई, लखनऊ में घूमते घूमते जी भर गया। अब तो जी चाहता है कि किसी वीरान खण्डहर में जा कर कुछ दिन गुज़ार दूं।"

एक युवती चंचल थी। विनोद का अवसर ढूंढ रही थी। मेरी ओर संकेत कर बोली—"दीपक जी। राजस्थान से अधिक बीरानगी और कहाँ मिलेगी। राजस्थान और रेगिस्तान शब्द कितने मिलते जुलते हैं।"

मैंने लम्बी साँस खींच कर कहा—"जी हाँ। पहले तो चल कर मेरी हवेली ही देख लीजिये। पहले वहाँ जितने घोड़े बँ थे, वे स्थान अब खाली पड़े हैं। आप सब चलेंगे तो कुछ दिन रौनक़ रहेगी।"

"यानी यूं कहिये कि आप का दौलतख़ाना एक अस्तबल के नज़दीक है" लड़की ने कहा।

मैंने कहा—"जी नहीं। आप राजपूतों की हवेलियों को क्या अस्तबल समझती हैं? आप कभी लखनऊ से बाहर भी गई हैं या नहीं? राजस्थान के ऊँचे ऊँचे महलों और बड़े बड़े किलों को देख कर आप इस छतर मंजिल पर हँसने लगेंगी।"

एक मित्र बोला—"अच्छा। यदि ऐसा है तो अब की बार दशहरे पर यही प्रोग्राम रहेगा। पढ़ाई तो भगवान् की दया से होती ही रहती है। ऐसा अवसर फिर कब आयेगा।"

दूसरी युवती गम्भीर थी। बोली—"मैं तो अपने भाई के

साथ जा सकती हूँ।" मैंने कहा—"मुझे क्या आपत्ति है। जहाँ आप सब हैं वहाँ एक और सही। यह तो और भी अच्छा है।"

कुछ दिनों बाद विजयादशमी आई। लखनऊ से हम दिल्ली आये और वहाँ से देहरादून एक्सप्रेस में बैठ कर झालावाड़ पहुँच गये। दूसरे दिन मैंने साथियों को ज़रा जल्दी जगा दिया। मैंने कहा—"एक क़िला दिखने चलना है। वहाँ एक पुरोहित रहते हैं जिन के पास मैंने सूचना भेज दी है।"

कुछ देर बाद एक जीप में हम सब रवाना हुए। सड़क जंगल में हो कर जाती है। साथियों के प्रश्नों का मैं लालकिले के गाइड की तरह उत्तर देता जा रहा था। एक ने पूछा—"उस स्थान का नाम आप ने क्या बताया था ?"

"गागरोन। यहाँ से चार मील है। प्राचीन काल में गर्ग मुनि यहीं रहते थे। अतः इस जंगल का नाम गर्गारण्य पड़ा। देहाती लोग इसे गागरोन कहते हैं।"

एक मित्र बोले—"देहातियों की भाषा कितनी सरल और सुन्दर है। यही गुण स्त्रियों की बोली में भी मिलता है।"

"जी हाँ" युवती बोल पड़ी—"वे आप से अच्छी हिन्दी बोलती हैं।"

मैं ऊँचा मुँह किये पेड़ों की ओर देख रहा था जैसे मैंने कुछ सुना ही नहीं। जीप तेज़ी से दौड़ती जा रही थी। मैं बोला—"वह देखो। दुर्ग की गगनचुम्बी दीवारें नज़र आ रही हैं।" सब लोग उत्सुकता से उस ओर देखने लगे। आहू नदी और कालीसिंध का संगम भी आ गया। यह दृश्य बड़ा रमणीक है। दोनों नदियों मानों अनेक शताब्दियों की प्राचीन गाथा को याद कर यहीं गले मिलती है। कालीसिंध की धारा बड़ी-बड़ी चट्टानों को विदीर्ण करती हुई आगे बढ़ जाती है जब तक वह अपनी बीती बातों को सदा के लिये अनन्त जलराशि में डुबो नहीं देती।

दूसरी युवती संगम की ओर देख रही थी। बोली—"वह हरा हरा सा क्या कोई बग़ीचा है ?"

मैंने कहा— हाँ। उसे "पीपा जी का बाग" कहते हैं। चौदहवीं शताब्दी में भक्त पीपा गागरोन के राजा थे और संत कबीर के प्रसिद्ध मित्र थे। उन से मिलने के लिये कबीरदास यहाँ आये थे।

पहली युवती बोली—"हो सकता है कि महामुनि गर्गजी का आश्रम भी यहीं रहा हो। इस जगल में यहाँ से अधिक सुन्दर स्थान और कहाँ मिलेगा।"

मैंने कहा— "संभव है। सैकड़ों बरसों से यहाँ साधु सन्यासी रहते आ रहे हैं। अब भी एक बैरागी रहते है। सितार बहुत अच्छा बजाते हैं। किन्तु, हमें तो आज दुर्ग देखने जाना है।"

दूसरे इतिहासप्रेमी मित्र बोल पड़े—"वाकई यह स्थान बहुत पुराना है। इस की तो रिसर्च करनी चाहिये।"

मैंने उन्हें सुझाया—"जी हाँ। इसी कालीसिंध के तट पर ईसा से दो सौ वर्ष पहले सम्राट पुष्यमित्र सुंग के पौत्र वसुमित्र ने यवन सम्राट मेनेन्डर की सेना को एक भयंकर युद्ध में परास्त किया था और अश्वमेघ का घोड़ा लौटा लिया था। "स सिन्धोर्दक्षिणेरोधसि चरन्नश्वानीकेन यवनानां प्रार्थितः।" मालविकाग्निमित्र में महाकवि कालिदास आगे कहते हैं "सिन्धुतीरे हतो यवनराजः।"

युवती की ओर संकेत कर मैं बोला—"जानती हो, यही वह सिन्धु है जहाँ से महाकवि की उज्जयिनी केवल साठ कोस दूर है। रामेश्वरम् से मानसरोवर तक भ्रमण करने वाले कालिदास से यह रम्य स्थल भी न छिप सका। यहाँ की चाँदनी रातें और यहाँ पर नौका विहार कवि को कितना प्रिय लगा होगा।"

"वाह कवि जी। आप को चाँदनी रातों की ही सूझती है। कहीं कल्पना के पुल बाँधते हुए इस नदी में न कूद जाइये। चलिये पहले किला तो दिखाइये।"

इस के बाद हम गागरोन पहुँचे। मैंने कहा—"देखिये, किले का दरवाजा कितना ऊँचा है। यह भी अपने समय का इन्डिया-गेट है। किले की दीवारें तो देखिये। कितनी मजबूत हैं। पाँच-पाँच सौ मन के पत्थर इन दीवारों में ठुके हुए हैं। सैंकड़ों वर्षों से नदी के प्रवाह, वर्षा और आँधी का इन पत्थरों पर क्या असर हुआ है ? अभी तो ये ज्यों के त्यों खड़े है। पता नहीं किन इन्जीनियरों ने यह दुर्ग बनाया है। हमें आठवीं शताब्दी के पहले इस दुर्ग का उल्लेख नहीं मिलता। किन्तु कुछ लोग इसे छठी शताब्दी का बताते हैं। इस के तीन ओर कालीसिंध घूम कर निकलती है। चौथी दिशा बचती है जहाँ ऊँचे पहाड़ हैं। नदी ने पहाड़ों को काट कर अपने लिए रास्ता बनाया है।"

दुर्ग में पहुँचने पर पुरोहित जी ने हमारा स्वागत किया। प्रणाम करते ही आशीर्वाद दिया। वे एक लम्बी अँगरखी और दुलंगी धोती पहने हुए थे। दाढ़ी बिल्कुल सफेद हो चली थी और शरीर जीर्ण था। युवतियों के अधरों पर उन की लम्बी दाढ़ी हिलने से मुस्कराहट आ गई। ब्राह्मण ने "अखण्ड सौभाग्यवती पुत्रवती भव" का पुराना आशीर्वाद दे कर उन की चंचलता बन्द की। वृद्ध पुरोहित को मालूम न था कि आजकल अनेक सुन्दरियाँ अविवाहित ही रहतीं हैं किन्तु माथे में सुहाग बिन्दु लगाये बिना नहीं रहती। पहली युवती मुँह लटकाये खड़ी थी और मैंने अपनी हँसी होठों में दबा रखी थी। पुरोहित के आगे बढ़ने पर मैंने युवती से धीमे स्वर में कहा--"कृपया राजस्थान में अपने ललाट पर यह साइनबोर्ड न लगाइये। यह तो लखनऊ की ही अदा है।"

वह कुछ बनावटी क्रोध में बोली—"नहीं जी। मैं ऐसी बातों की क्या परवाह करती हूँ। आज की नारी बिल्कुल स्वतंत्र है। मैं किसी पुरानी रूढ़ि को नहीं मानती। मैं जो भी चाहूँ स्वतंत्र रूप से कर सकती हूँ।"

मैंने कहा—"राजस्थान में स्वतंत्रता की शेखी न जताइये। स्वतंत्र तो वे थीं जिन्हें हजारों योद्धा आग में कूदने से नहीं रोक पाते थे और जिन की सम्मान-रक्षा के लिए लाखों वीर अपने प्राण दे देते थे। बड़े बड़े सम्राट उन के हाथ नहीं लगा सकते थे और एक आप हैं जो क्लास में ज्यादा नम्बर लाने के लिए प्रोफेसरों के पीछे घूमती हैं और लिपस्टिक लगा कर हजरतगंज में फिरती हैं।" मैंने आगे बढ़ कर पुरोहित से कहा—"पुरोहित जी। ये सब हमारे मेहमान हैं। इन्हें ज़रा यहाँ का कुछ इतिहास भी बताते जाइये।"

"इतिहास !" वृद्ध के शरीर में एक सनसनी सी दौड़ गई मानो अतीत का सारा दृश्य उस के आगे चलचित्र की भाँति घूम गया हो। आँखें तन गईं। कुछ देर मेरी ओर देखते रहे और फिर एक लम्बी साँस ले कर बोले—"हाँ कुमार! अब केवल इतिहास ही तो बचा है जिस के बल पर यह दुर्ग अपना मस्तक ऊँचा किये हुए है।"

तब पुरोहित ने कई किस्से कहे। उन के द्वारा हम ने कई बातें जानीं। किले के कुछ फोटो लिए। बहुत सी बातें कई दिनों तक मेरे मस्तिष्क में घूमती रहीं जिन्होंने बाद में एक कथानक का रूप धारण कर लिया और इस प्रकार यह उपन्यास बन गया।

माधवसिंह 'दीपक'

पीपाखेड़ी हाउस,
झालावाड़
(राजस्थान)

★

बोलती लहरें

पहला परिच्छेद

आधी रात थी। सावन की घटा से अंधकार अधिक बढ़ गया था। हवा साँय-साँय करती चल रही थी। कुछ बूंदें गिर रही थीं। भयंकर बाढ़ के कारण कालीसिंध की लहरें अट्टहास कर रही थीं। मेघों की गर्जना से भयंकरता दूनी हो रही थी। बिजली की कौंध नदी का दृश्य और भी भयानक बना देती थी। दुर्ग में सब सोये हुए थे। ऐसे भयंकर प्रहर में झरोखे में बैठी हुई एक षोड़षी आशंकाओं से विचलित सी नदी की ओर देख रही थी। बाढ़ आने पर नदी का पानी तीन-चार दिन तक उतरने का नाम नहीं लेता किन्तु अनुभवी कारीगरों ने यह झरोखा दुर्ग के एक ऐसे स्थान पर बनाया था कि भरपूर बाढ़ आने पर भी पानी हाथ डेढ़ हाथ नीचे रह जाता और किले के भीतर नहीं पहुँच सकता था।

... सहसा कुछ आहट पाकर युवती ने तलवार खींच ली और वहीं दीवार से सट कर खड़ी हो गई। आगन्तुक के समीप आते ही "कौन है" कह कर राजकुमारी ने ललकारा!

"कान्ति" झट से उत्तर मिला।

"पगली कहीं की। इतनी रात चले तुझे यहाँ आने की सूझी है?"

"वाह ! यह भी खूब रही। उलटा चोर कोतवाल को डाँटे। महलों को छोड़ कर आज आप यहाँ कैसे ? यदि मेरे बजाय कोई और यहाँ आ जाता तो क्या होता ?"

"तो अब तक वह मौत के घाट उतर गया होता और इस नदी में कहीं बह रहा होता।"

"यदि अधिक व्यक्ति होते तो आप कहाँ बच सकती थीं ?"

"क्यों" राजकुमारी ने कहा—"यह नदी किस लिये है। इस इस ऊजड़ स्थान में भला कौन आयेगा। केवल एक प्रहरी कभी-कभी चक्कर लगा जाता है। वह अपना विश्वास पात्र है। अच्छा, अब व्यर्थ की बातें जाने दे। यहाँ से कुछ दूर जाकर बैठ जा। यदि कोई आहट आये तो मुझे सूचित कर देना।"

क्रान्ति चली गई। राजकुमारी का एक-एक क्षण एक-एक मास की तरह बीत रहा था। निराशा और आशा से युवती का मुख कभी म्लान और कभी पुलकित हो उठता था। उसे जिसकी प्रतिक्षा थी वह दुर्ग से लगभग आधे कोस की दूरी पर सोया हुआ था। एक अश्वारोही वेग से उसके घर की ओर बढ़ रहा था। वहाँ पहुँच कर उस ने फौरन दरवाजा खटखटाया।

"कौन ?"

"मदन सिंह"

प्रहरी ने हाथ में तलवार लिये हुए द्वार खोला। आगन्तुक बिना कुछ कहे प्रहरी को घोड़ा सौंप कर शयनागार की ओर बढ़ा।

"गुलाब ? गुलाब ?"

"कौन ?"

"मदन ! उठो यह कहीं सोने का समय है ?"

"नहीं तो क्या जगने का समय है ?"

मदन ने कहा—"मैं नीम का निशान देख कर सीधा चला आ रहा हूँ।"

"तूने खुद देखा है ?"

"हाँ। अब देर न करो।"

दोनों मित्र घोड़ों पर सवार होकर चल पड़े। गुलाबसिंह गागरोन के राजा नरेन्द्रसिंह की अश्वारोहणी का नायक था और मदनसिंह उस का मित्र। दुर्ग से लगभग डेढ़ कोस दूर मदनसिंह रतनपुर नामक गाँव में रहता था। कई दिनों पहले गुलाब के आग्रह पर मदन अश्वारूढ़ होकर नदी की बाढ़ देखने के लिए दुर्ग के पास जाता था और जब पानी उस झरोखे से हाथ डेढ़ हाथ नीचे रह जाता तो फौरन वह अपने गाँव के पास आ जाता था। उसका गाँव भी कालीसिंध के किनारे बसा हुआ था। किनारे पर एक नीम का पेड़ था जिस का तना बाढ़ आने पर लगभग आधा डूब जाता था। उस ने नीम के तने पर कुल्हाड़ी से गहरा निशान कर दिया था और उस पर कुछ सफेदी पोत दी थी जिस से रात में भी वह उसे देख सके। ज्योंही पानी उस निशान तक पहुँचता, मदन को विश्वास हो जाता कि उस समय दुर्ग के पास नदी का पानी झरोखे से थोड़ा ही नीचे है। इस तरकीब से अँधेरी रात में भी बाढ़ का अनुमान लगाने में मदन को कोई भ्रम नहीं हो सकता था।

दुर्ग के समीप पहुँचते ही दोनों अश्वारोही घोड़ों से उतर पड़े। गुलाब के अश्व को सँभालते हुए मदन ने कहा—"देखो गुलाब सँभल कर जाना। इस धारा के प्रवाह से तुम परिचित हो किन्तु इतनी बड़ी हिम्मत आज पहली वार कर रहे हो। झरोखे के प्रकाश को बराबर देखते रहना। यदि उस से दो तीन हाथ भी आगे निकल गये तो लौट कर वहाँ नहीं पहुँच

सकोगे।"

"मेरे हाथों पर विश्वास रखो मदन ! जब तक मैं न लौटूँ, तुम यहाँ सावधानी से छिपे रहना" कह कर गुलाबसिंह नदी में कूद पड़ा। लहरों का उद्वेलन भयानक शब्द कर रहा था किन्तु वीर नायक अपनी बलिष्ट भुजाओं से उन का मर्दन करता हुआ निर्भीकता से आगे बढ़ रहा था।

सहसा लहरों से आवाज आई "कमलिनी !"

"गुलाब" राजकुमारी के कोमल कंठ ने उत्तर दिया। प्रसन्नता से उस का हृदय नाच उठा। उस ने देखा कि उस का वीर प्रेमी एक हाथ से झरोखे को पकड़े हुए था। दोनों हाथों से सहारा देते हुए युवती ने उसे ऊपर खींच लिया। ऊपर आते ही गुलाब ने उसे अपने भुजपाशों में बांध लिया। राजकुमारी यवक की गीली देह से लिपट कर अपने सारे विरह को भूल गई।

"मुझे देर हो गई कमलिनी, बुरा न मानना। तम यहाँ कब से बैठी हो ?"

"मैं तो ग्यारह बजे से यहीं हूँ। तुम्हारी याद मुझे सोने ही नहीं देती।काश मैंने राजा के घर में जन्म न लेकर एक भिखारी के घर में जन्म लिया होता। रोज तुम से भीख तो माँग पाती" दीपक बुझाते हुए उस ने कहा।

"प्रेम में कोई राजा और कोई रंक नहीं होता कमिलनी। जीवन का मोह छोड़ कर इस नदी की राह से मैं तुम्हारे पास आया हूँ। इन प्राणों से यदि कोई अधिक प्रिय वस्तु है तो वह केवल तुम हो प्राणप्रिये।"

"प्राणनाथ !" इसके आगे युवती कुछ न कह सकी। जीवन में पहली बार उस ने यह शब्द कहने का साहस किया था।

× × ×

"गुलाबसिंह ! क्या वहीं सो गया था ? तुझे पता है मैं यहाँ कब से चिंतित हूँ ? रोशनी बुझने पर मैं तो यह समझा कि झरोखा तो गया एक तरफ, तू कहीं गंगा जी तो नहीं पहुँच गया। मैं यहाँ कब से प्रतीक्षा कर रहा हूँ ?"

गुलाबसिंह मुस्कराया और बोला—"तेरी दोस्ती का अच्छा पुरस्कार दूंगा। मदन तेरे बिना मैं कुछ नहीं कर सकता।" वह अपने अश्व को थपथपा रहा था।

"वाह रे पुरस्कार देने वाले। तू तो खुद ही लुटा बैठा है। मुझे क्या इनाम देगा।"

"जानता है, मैं अश्वारोहिणी का नायक हूँ। दो हजार घोड़ों को जिधर चाहूँ उधर मोड़ सकता हूँ। अच्छा, जा तुझे आज से अपनी सेना में भर्ती करता हूँ। तुझे सौ सवारों का अध्यक्ष बनाता हूँ।"

" तू तो दो हजार पर और मैं केवल सौ आदमियों पर। क्या मैं तुझ से किसी बात में कम हूँ ? जिस दिन काम पड़ेगा उस दिन पता चलेगा कि नायक जी कितने पानी में हैं।"

"अरे जितने पानी में मैं उतर सकता हूं उस की तूझे हिम्मत भी नहीं हो सकती। लेकिन मदन ! एक बात याद रखना। जब तू मेरे साथ सेना में रहे तो वहाँ तू तड़ाक से काम नहीं लेना। जरा अदब से बोलना पड़ेगा।"

"अच्छा ठीक है।"

★

दूसरा परिच्छेद

"रात को तो बड़ी घुट-घुटकर बातें हो रहीं थी राजकुमारी जी। पता है, मैं पास ही में छिपी हुई थी" कान्ति ने कमलिनी के शयनागर में खिलखिलाते हुए कहा।

"अरी इतनी जोर से क्यों बोलती है। ज्यों-ज्यों मैं चुप रहती हूँ, तू मेरी दूनी छेड़ करती है। तू कहीं पगली तो नहीं हो गई?"

"अच्छा मैं पगली ही सही। तभी तो आप मेरी परवाह नहीं करती। कभी मेरा परिचय भी करा दो तो आप का क्या बिगड़ जायेगा। आखिर मैं आप से क्या छीन लूँगी?"

"चल हट, तू रहने दे" राजकुमारी ने कहा—"तू क्यों बीच में पांव फैलाती है। तेरी नजर तो प्रधान मंत्री के लड़के पर है। तभी तो तू उस की इतनी प्रशंसा करती है। सच बता?"

"बिल्कुल ग़लत। विक्रम तो आप के सौन्दर्य पर मुग्ध हो रहा है। भला मेरी उसे क्यों याद आने लगी। जहाँ अशर्फी पड़ी हो, वहाँ अठन्नी को कौन पूछता है राजकुमारी जी।"

कमलिनी ने कहा—"विक्रमसिंह बिल्कुल नासमझ है। भला उस के लिए मेरे हृदय में क्या स्थान हो सकता है। यह हृदय तो पहले ही गुलाब का हो चुका है।"

"किन्तु विक्रम को इसका क्या पता है?"

"आखिर कब तक पता न लगेगा। एक न एक दिन उसे पछताना पड़ेगा। मैं विवश हूँ।"

"इस में उस बेचारे का क्या अपराध है राजकुमारी जी। आप की इन बड़ी-बडी आँखों से जिस किसी की आँख लड़ जाती होगी वही वेचारा बेसुध होकर बैठ जाता होगा। आप का चाँद-सा चेहरा चकोर को तो आकर्षित करेगा ही। इस में चकोर का क्या दोष है ?"

"चकोर और मनुष्य मैं बहुत अन्तर होता है कान्ति। यदि मनुष्य को पता लग जाये कि एक स्त्री का एक पुरुष से प्रेम है तो उसे पाने की चेष्टा मनुष्यता नहीं पशुता है।"

"किन्तु पता लगे तभी तो"

× × ×

धीरे-धीरे दिन बीत गया। रात को भोजन के समय द्वारपाल ने राजाधिराज के अन्तःपुर में आगमन की सूचना दी। रानी कुसुम कुमारी आज कुछ उदास सी बैठी हुई थी।

भोजन करते हुए राजा ने पूछा—"क्यों कुसुम ? आज तुम मौन क्यों हो ?"

"कुछ नही महाराज ! मेरी मौन का आप पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। मैंने कितनी बार आप से निवेदन किया कि कमलिनी अब सयानी हो गई है। उस के विवाह का प्रबन्ध होना चाहिए लेकिन अभी तक कुछ भी नहीं हो पाया।"

"हमें स्वयं इसकी चिन्ता है, रानी। हम खूब जानते हैं कि कि उस का विवाह शीघ्र ही होना चाहिए। कमलिनी का बढ़ता हुआ सौन्दर्य हमारे समस्त राज्य को नष्ट कर सकता है। सर्व-साधारण की दृष्टि से दूर रखने पर भी पता नहीं उस के रूप की चर्चा कैसे फैलती जा रही है। हमें अपने गुप्तचरों से ज्ञात

हुआ है कि गगनपुर राज्य का नवाब फैय्याज खाँ अपनी फौज बढ़ा रहा है। उस का फौज बढ़ाना भी एक उद्देश्य रखता है। यदि उस ने कोई धृष्टता की तो उसे दण्ड देने के लिए हमें अपनी सारी शक्ति झोंक देनी पड़ेगी।"

"क्यों महाराज" कुसुम ने कहा—"क्या प्रधान मंत्री ने इस विषय में कहीं दूत नहीं भेजा ? मुझे तो ऐसा लगता है कि वे बिल्कुल रुचि नहीं ले रहे हैं।"

"बात यह है रानी कि वे कमलिनी का विवाह अपने लड़के से कराना चाहते हैं किन्तु हमारे विचार से तो लड़की कहीं बाहर दी जाये तो अच्छा है। तुम्हारी क्या राय है ?"

"प्रधान मंत्री का सुझाव तो अच्छा है। कमलिनी सदा मेरी आँखो के आगे रह सकेगी। इस से बढ़कर खुशी मेरे लिए और क्या हो सकती है। यदि वह इस के लिए तैयार हो जाये तो बिल्कुल ठीक है।"

"अच्छा, तुम उससे पूछना। देखें वह क्या कहती है।"

★

तीसरा परिच्छेद

"गुलाबसिंह, आज सिपाहियों से हम एक मजेदार बात सुन कर आये हैं" मदन ने कहा।

"क्या बात है?" चौंक कर उस ने पूछा। गुलाब ऊपर के कक्ष में बैठा हुआ था।

"अरे विक्रमसिंह है ना विक्रमसिंह।"

"कौन विक्रमसिंह ?"

"वही बैरीसाल का लड़का।"

"हाँ हाँ।"

"उस मूर्ख ने यह प्रतिज्ञा की है कि या तो मैं राजकुमारी कमलिनी से शादी करूँगा या अपने प्राण दे दूँगा। कहता है मैं क्षत्रिय हूँ। जिस बात की ठान लेता हूँ उसे करके ही छोड़ता हूँ। लेकिन उस बुद्धू को यह पता नहीं कि उस जैसे यहाँ जाने कितने नाक रगड़ते हैं।"

"राम राम, यह तो बड़ा अनर्थ हो गया" गुलाब ने निश्वास ले कर कहा—"उसे तो यह पता भी नहीं कि राजकुमारी क्या चाहती है। फिर उस ने बिना सोचे समझे यह प्रतिज्ञा कैसे कर डाली।" वह चुप हो कर सोचने लगा।

कुछ देर बाद वह फिर बोला—"चाहे कुछ भी हो मदन। एक बार उसे अवश्य समझाना चाहिये। समझाने बुझाने पर सम्भव है वह अपना दुराग्रह छोड़ दे।"

"भला वह कब मानेगा" मदन ने कहा— "वह प्रधान मंत्री का लड़का है। अपनी नाक सदा ऊँची रखता है। भले ही तुम समझा कर देख लो। हम भी देखेंगे क्या गुल खिलता है।"

"कुछ भी हो, समझाना अपना फर्ज है" गुलाब ने कहा।

इधर उधर की बातों के बाद मदन ने पूछा--"गुलाब ! हमें एक बात तो बताओ। और तुम्हारी सब हरकत हम जानते हैं किन्तु तुम ने अब तक यह न बताया कि तुम्हारी पहली भेंट राजकुमारी से कैसे हुई थी ?"

"यह तो कई दिन पहले की बात है। यह सब उस की दासी चम्पा की करामात है। वह मेरी विश्वास पात्र है। शिवरात्रि के एक दिन पहले उस ने मुझे सूचित किया कि प्रातःकाल राजकुमारी महारण्य की शिवमूर्ति पर पुष्प चढ़ाने जायेंगी। बस फिर क्या था, मैं भी आखेट के बहाने उस ओर पहुँच गया। उस के रथ के साथ पच्चीस घुड़सवार थे। वे अपनी ही सेना के व्यक्ति थे। वे भला मुझे कैसे रोक सकते थे। दोनों हाथों में पुष्प लिये मैं भी शिव-मन्दिर में पहुँचा। चम्पा ने मेरी ओर संकेत कर बड़े गर्व से कहा—"ये हैं हमारे नायक गुलाबसिंह जी।"

कमलिनी ने लज्जित नेत्रों से मेरी ओर देखा और नमस्कार कर बोली—"बड़ी प्रसन्नता हुई आप से मिल कर।"

मैंने कहा—"शिवरात्रि को मैं भी यहाँ फूल चढ़ाने आता हूँ। मेरे धन्य भाग, आज आप के भी दर्शन हुए।"

राजकुमारी बोली—"मैं आप की वीरता की प्रशंसा सुनती रहती हूँ। मैंने आप को एक बार सैन्य-संचालन करते देखा था। आज मेरा सौभाग्य है जो आप से मिल पाई।"

मैंने कहा—"मैं तो आप का सेवक हूँ। महाराज की कृपा है जो मुझे सेना में स्थान दिया गया है।"

वह बोली—"आप जैसे वीर ही हमारे राज्य के रक्षक हैं। ऐसा कौन व्यक्ति होगा जिसे आप पर गर्व न हो। मैं तो चाहती हूँ कि आप हमारे प्रधान सेनापति बनें।"

मैंने झट से कहा—"यह तो आप की गुणग्राहकता है राज-कुमारी जी। मैं किस योग्य हूँ। मैं तो केवल अपने प्राण दे सकता हूँ। आप की सेवा के लिए सदैव प्रस्तुत हूँ। अच्छा अब आज्ञा दीजिये। फिर कब दर्शन होंगे ?"

"अभी कुछ नहीं कह सकती।" उस ने मदभरे नेत्रों से मेरी ओर देखा और सिर झुका लिया।

मैं विदा ले कर चला आया। वहाँ अधिक ठहरना ठीक नहीं था। वह मेरी पहली भेंट थी। उस के बाद यह सब काम चम्पा ने ही बनाया है। वह कभी कभी आती रहती थी। फिर तुम जानते ही हो कि मैं सीमाप्रान्तीय डाकुओं का दमन करने चला गया था और कुछ दिन पहले ही आया हूँ।

किन्तु मदन, एक बात बताऊँ। क्या तुम जानते हो कि राजकुमारी के पास एक बड़ी चतुर और सुन्दर सहेली रहती है ?"

"सच ? तूने मुझे पहले क्यों नहीं बताया ?"

"उस दिन वह भी उस के साथ थी। जल्दी जल्दी में उस से मैं कोई बात न कर सका। उस ने क्या सोचा होगा ?"

"क्या नाम है उसका ?" मदन ने उत्सुकता से पूछा !

"कान्ति, चम्पा ने एक दिन बताया था।"

"कान्ति ! बड़ा मीठा नाम है। आह कान्ति !" मदन ने विनोद के साथ अपनी छाती पर हाथ रखा और एक लम्बी

साँस ली।

थोड़ी देर बाद गुलाबसिंह को विक्रम का ध्यान आया और वह बहुत गम्भीर बन गया। मदन ने कहा—"आखिर ऐसी क्या बात है। चलो, उस से चल कर मिल आयें।"

दोनों मित्र अश्वारूढ़ हो कर बैरीसाल के यहाँ पहुँचे। गुलाब ने द्वारपाल से पूछा—"प्रधान मंत्री जी क्या यहीं विराजते हैं?"

"जी नहीं, वे महाराज से मिलने पधारे हैं।"

"और कुमार विक्रमसिंह जी?"

"हाँ, वे तो यहीं हैं।"

"अच्छा उन्हें सूचित कर दो कि गुलाबसिंह आया है।

स्वीकृति मिलते ही दोनों ऊपर पहुँचे।

"पधारिये गुलाबसिंह जी। आज तो बड़ी कृपा की आपने।" विक्रम ने खड़े हो कर अभिवादन किया। वह मँझले कद का हृष्ट पुष्ट और बलवान व्यक्ति था। उस के चेहरे और बोल-चाल से वह बड़े घराने का युवक लगता था। किन्तु अवस्था में गुलाब से छोटा था और स्वभाव से बहुत उग्र और हठी था।

शिष्टाचार की बातों के बाद विक्रमसिंह बोला— "कार्यवश पिता जी अभी राजमहल पधारे हैं। यदि मेरे योग्य कोई सेवा हो तो कहिए।"

गुलाबसिंह की आकृति गम्भीर बनी हुई थी। उस ने कहा "वस्तुतः मैं आज आप से ही मिलने आया हूँ। मैंने सुना है कि आप ने राजकुमारी से विवाह करने की प्रतिज्ञा की है। क्या यह सच है विक्रमसिंह जी?"

"हाँ, हाँ, यह मेरा अटल निश्चय है।"

"बड़ा साहस कर डाला आप ने। भाई, हम सब तो राजा-धिराज के सेवक हैं। उन की आज्ञा और राजकन्या की अनुमति

के विना आप अपनी प्रतिज्ञा कैसे पूरी कर सकेंगे ?"

विक्रमसिंह जोश में आकर बोला—"मैंने राजपूत के घर में जन्म लिया है गुलाबसिंह जी। मेरे पूर्वजों ने अपनी तलवार से बड़े बड़े राजाओं को परास्त कर दिया है। मुझ में भी वही खून है। मैं चाहूँ तो राजा और उन के समस्त राज्य को अपनी तलवार के आगे झुका सकता हूँ। यदि मेरी राह में कोई आया तो उसे काट कर अलग फेंक दूँगा। मुझे अपनी प्रतिज्ञा से कोई विचलित नहीं कर सकता। महाराज को पता भी नहीं कि इस राज्य के असली शासक मेरे पिता बैरीसाल हैं। वे तो नाम के राजा हैं। यदि उन्होंने मेरी बात न मानी, तो खून की नदियाँ बह निकलेंगी।"

क्रोध से गुलाबसिंह की आँखें तन रही थीं। फिर भी अपने को सँभाल कर वह बोला—"इतने उग्र न बनो कुमार। गागरोन की धरती पर केवल आप ही राजपूत हों ऐसी बात नहीं है। यदि तलवारें निकल पड़ीं तो हजारों निरपराध व्यक्ति मारे जायेंगे। राज्य से विद्रोह करना आग से खेलना है—वह भी एक ऐसे उद्देश्य के लिये जिसे आप जबर्दस्ती पूरा करना चाहते हैं। आप को ज्ञात है कि जिस कन्या के लिये आप ने प्रतिज्ञा की है उस पर एक पुरुष पहले ही अपना अधिकार समझता है।"

"वह कौन ?" विक्रम ने जोर से पूछा।

"वह गुलाबसिंह है" उस ने छाती तान कर कहा। विक्रम एक क्षण तक स्तम्भित रहा और गुलाबसिंह को घूरता हुआ बोला—"अच्छा ! तो यह बात है। अब समझा आपके पधारने का मतलब। वही तो मैं कहूँ कि आज कैसे रास्ता भूल गये।"

मदनसिंह को यह घूरना बर्दाश्त नहीं हुआ। लपक कर बोला—"विक्रमसिंह जी। आप समझते क्या हैं ? गुलाबसिंह

आप की तरह थोथी बातें नहीं बनाता। वह राजकुमारी से प्रेम करता है। आप और हम जैसे वीर तो इस की तलवार पोंछते हैं तलवार। आप किस होश में हैं ?"

"तो इस का फैसला अभी हो जाये" अपनी तलवार खींच कर विक्रम ने ललकारा—"मैं अपना अपमान कभी नहीं सह सकता। मेरे रहते कोई और व्यक्ति राजकुमारी पर नज़र डाले, यह असंभव है।"

"ऐसी जल्दी क्या है विक्रमसिंह" मूठ पर हाथ रखते हुए गुलाबसिंह बोला— "हमारा फैसला तो खुले मैदान में होगा। यहाँ घर में बिल्लियों की तरह नहीं। तुम्हारी चुनौती मुझे स्वीकार है। तब तक तुम्हें महाराज और राजकुमारी की इच्छा भी मालूम हो जायगी। मैंने चूड़ियाँ नहीं पहन रक्खी हैं विक्रमसिंह।"

सहसा मदनसिंह दोनों के बीच में खड़ा होगया और गुलाब को अपने दाहिने हाथ से लपेटता हुआ फौरन बाहर ले गया।

★

चौथा परिच्छेद

"चम्पा ! ज़रा कमलिनी को बुला लाना " रानी ने हुक्म दिया।

"अभी जाती हूँ" कह कर वह चली गई।

राजकुमारी के पास जाकर बोली—"रानी जी ने बुलाया है"

"अभी आई। कान्ति, जरा यहीं बैठना, मैं माँ के पास हो आऊँ" उस ने सहेली से कहा।

"अच्छा" कांति बोली—"आज कोई विशेष बात तो नहीं है ?"

"क्या पता" कह कर वह चली गई।

"आओ कमिलिनी। आजकल तुम मेरे पास कम बैठती हो" रानी ने कहा " दिन भर कान्ति से ही बातें करती रहती हो।"

"नहीं ऐसी, कोई बात नहीं" कह कर वह चुप हो गई और ज़मीन की ओर देखने लगी।

रानी ने पास खिसक कर कहा—"बेटी ! अब तुम सयानी हो। तुम्हें मालूम है कि तुम्हारे सम्बन्ध की बात चल रही है—प्रधान मंत्री के पुत्र विक्रम के साथ ?"

विक्रम के नाम से राजकुमारी चौंकी, फिर कहने लगी "हाँ एक बार कान्ति ने ज़िक्र किया था।"

रानी गम्भीर होकर बोली--"मेरे विचार से तो अच्छा ही है

कमलिनी। तुम सदा मेरी आँखों के आगे रहोगी। इस से अधिक सुख मुझे और क्या मिल सकता है। वैसे तुम्हारी जो इच्छा हो वह तुम निस्संकोच कहो।"

इतने ही में राजा का सप्तवर्षीय पुत्र महेन्द्रसिंह खेलता-खेलता आया और बोला "क्यों जीजी! तुम मेरे साथ ही रहोगी ना ?"

"हाँ भैया !"

बालक खुश होकर चला गया। रानी ने पूछा—क्या यह सच है ?"

"नहीं माता जी, मैं विक्रम से विवाह करना नहीं चाहती। ऐसे दुराग्रही और उग्र पुरुष के साथ मैं अपना जीवन नहीं बिता सकती। हमारे राज्य में क्या वही एक युवक है। यदि आप मुझे अपने ही सामने रखना चाहती हैं तो मैं गुलाबसिंह को उस से अच्छा समझती हूँ।"

"गुलाबसिंह !" रानी ने विस्मय से कहा।

हाँ !"

"यह क्यों कमलिनी ? उस का पद भी बहुत बड़ा नहीं। हमें अपनी मर्यादा का भी तो ध्यान रखना है।"

"माता जी! क्षत्रिय कन्या किसी पदलोलुप के पीछे अपने प्राण नहीं देती। वह वीर पुरुष का सम्मान करती है। हमारा सब से बड़ा धन वीरता है।"

"यह तो ठीक है बेटी, किन्तु महाराज कैसे मानेंगे। शायद वे गुलाब सिंह को पदोन्नत करना भी नहीं चाहते।"

"कुछ भी हो, मैंने अपना निश्चय प्रकट कर दिया है।"

रानी ने कहा—"अच्छा, मैं महाराज से निवेदन करूँगी।"

× × × ×

उधर प्रधान मंत्री बैरीसाल महाराज से मंत्रणा करके अपने घर पहुँचे। कुछ ही देर बाद विक्रम ने उन के आगे आ कर कहा—"पिता जी, मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि नायक गुलाबसिंह किसी दिन मेरे हाथ से मारा जायेगा।"

"अरे नादान ! तू कहाँ तक प्रतिज्ञा करता रहेगा। तेरे कारण मैं भी संकट में पड़ गया हूँ। अभी एक प्रण करने में देर हुई नहीं कि यह दूसरी मुसीबत मोल ले रहा है। तू बाप दादों के गौरव को भी भूल बैठा है। जानता है ऐसी हठ करने से जान के लाले पड़ जाते हैं।"

"पिता जी ! मैं क्षत्रिय हूँ। मुझे मृत्यु से क्या भय। गुलाबसिंह मेरी राह में पहाड़ बनना चाहता है। कहते हैं वह कमलिनी से प्रेम करता है। मैं उसका नाश किये बिना कभी चैन नहीं ले सकता।"

"प्रेम करता है ?" बैरीसाल ने विस्मय से पूछा।

"जी हाँ।"

प्रधान मंत्री विचार में पड़ गये कुछ देर बाद धीरे से बोले—"आश्चर्य की बात है। मुझे इस की अब तक कोई सूचना नहीं मिली। मैं इस का पता लगा कर महाराज को सूचित करूँगा। तब तो बेटा, तुम्हें अधिक परिश्रम नहीं करना पड़ेगा। उस का अन्त समीप जान पड़ता है।"

विक्रम ने संतोष की साँस ली और फिर उत्सुकता से पूछा—"पिता जी, महाराज ने क्या निश्चय किया है ?"

"अभी कोई निश्चय नहीं किया। पहले तो उन्होंने अनिच्छा प्रकट की। कहने लगे, राजकुमारी को किसी अन्य राज्य में भेजेंगे। साथ ही उन्हें यह भी आशंका है कि तुम कहीं विद्रोह न कर बैठो। अतः बात को टालते हुए वे बोले कि मैं रानी से

परामर्श करूँगा और राजकुमारी से पुछवाऊँगा।"

विक्रम के तेवर फिर बदल गये। क्रोध में वह कहने लगा—"मैं समझ गया महाराज का मतलब। यदि उन्हें इन्कार ही करना है तो स्पष्ट क्यों नहीं कह देते। इस प्रकार कब तक टालते रहेंगे। रानी भी उन्हीं की है और लड़की भी उन्हीं की लड़की है। उन की क्या मजाल है जो वे राजा की आज्ञा न माने। पिता जी! इस प्रकार काम नहीं चलेगा। मेरे अधिकार में पाँच सौ सैनिक हैं। आप की सहायता से मैं बात की बात में इस राज्य का तख्ता उलट सकता हूँ। राजा में दम ही क्या है। मौत की घड़ियाँ गिनते रहते हैं।"

"नहीं बेटा! तुम भूलते हो। तुम में अभी बहुत लड़कपन है। जानते हो राज्य द्रोह का क्या परिणाम होता है। ऐसा काम कभी न करना। मैं नीति के द्वारा सब काम सफल बना सकता हूँ।"

विक्रम ने फिर उसी जोश में कहा—"ऐसे कामों वे ही सफल होते है जिन के हाथ में चमकती हुई तलवारें होती हैं। आप मुझे प्राणदण्ड का भय क्यों दिखाते हें? प्राणों का मोह तो कायरों को होता है।" वह तेज़ी से अपने कक्ष की ओर चला गया और नौकर को आज्ञा दी कि जल्दी से अभय सिंह को बुलाया जाये।

प्रधान मंत्री भविष्य की आशंकाओं से चिन्तित हो गये। सोचने लगे "कैसा उद्दण्ड लड़का है। समझाने से समझता नहीं। अपने वृद्ध पिता की बात भी नहीं मानता। न जाने ईश्वर की क्या इच्छा है। यदि यह विद्रोह कर बैठा तो परिस्थिति भयंकर हो जायेगी। इस की उद्दण्डता के कारण ही महाराज ने स्वीकृति नहीं दी।"

अभयसिंह विक्रमसिंह का घनिष्ट मित्र और विश्वस्त सलाहकार था। घृणित कर्मों की ओर उस की प्रवृत्ति अधिक रहती थी। सैन्य-प्रयाण के समय वह जिधर भी जाता कृषकों के साथ क्रूरता का व्यवहार करता था। निरपराध किसानों से रुपया ऐंठ लेना उस के बायें हाथ का काम था।

उस के आने पर विक्रम ने उसे सब हाल कह सुनाया। अभय ने सोचा "यही स्वर्ण अवसर है। लूटमार करने का इस से अच्छा मौका कब मिलेगा।" उस ने तुरन्त विक्रम के कान भरने शुरू किये। बोला—"कुमार! आप जैसे पराक्रमी योद्धा से किस की मजाल है जो जीत जाये। राजकुमारी आप के ही गले में वरमाल डालेगी। वह तो आप के लिये दिन रात व्याकुल रहती है। राजा के भय से कुछ कहती नहीं और यदि माँ से कहे भी तो महाराज कब मानने लगे। यह राजा वास्तव में बड़ा अभिमानी ह। सोचता है कि राजा की लड़की का मंत्री के लड़के से कैसे विवाह हो सकता है। उसे पता नहीं है कि हम ईंट से ईंट बजा देंगे। उस की सारी अक़्ल ठिकाने लग जायेगी। लूटमार से अपरिमित धन राशि एकत्र हो सकती है और कुछ ही दिनों में हमारी सैन्य संख्या दस गुनी बढ़ सकती है। बहुत अच्छा अवसर है कुमार। इसे हाथ से न जाने दीजिये। राजकुमारी तो राजकुमारी, आप चाहें तो सारा राज्य आप के अधिकार में आ सकता है।"

"बिल्कुल ठीक है, अभयसिंह। तुम ठीक कहते हो। मेरा भी यही विश्वास है। भगवान शंकर ने चाहा तो कुछ समय में ही हम इसे करके दिखायेंगे।"

अभयसिंह बोला—मेरे विचार से तो आज ही रात को इस नगर से प्रस्थान कर देना चाहिये। शुभ कार्य जितनी जल्दी हो, उतना ही अच्छा है।"

"हाँ, हाँ, आज ही सही" विक्रम ने कहा—"जब चलना है तो रुकना क्या।"

★

पाँचवां परिच्छेद

"क्यों कुसुम ? फिर तुम ने कमलिनी से पूछा ?"

"हाँ महाराज ।"

"क्या कहा उस ने ?"

"उस की इच्छा नहीं है ।"

राजधिराज चुप हो गये । फिर बोले—"आखिर वह राज-कन्या है रानी । हमारी लड़की एक अस्थिर वुद्धि वाले अल्हड़ युवक को कैसे पसन्द करती है । वह तो किसी बड़े राज्य की महारानी बनेगी । हम जानते हैं कि विक्रम दिन पर दिन उद्दण्ड होता जा रहा है । प्रधान मंत्री का लड़का समझ कर हम ने उसे पाँच सौ सैनिकों का अध्यक्ष बनाया । अब वह हमारी कन्या से विवाह करने की सोच रहा है और इस प्रकार अपना प्रभुत्व बढ़ाना चाहता है । प्रधान मंत्री स्वयं अपने इकलौते पुत्र को उन्नत देखना चाहते हैं । वे बार बार इस के लिये कहते रहते हैं । अपना पुत्र अभी बालक है रानी । कहीं ऐसा न हो कि हम किसी युद्ध में मारे जायें और विक्रमसिंह महेन्द्र से राज गद्दी छीनने का प्रयत्न करे ।"

अनिष्ट की आशंका से घबराकर रानी ने कहा—"भगवान् ऐसा कभी न करे ।"

कुछ देर बाद रानी धीरे से बोली—"एक बात कहूँ ?"

"कहो, संकोच क्यों करती हो ?"

"कमलिनी तो गुलाबसिंह को चाहती है ।"

"गुलाब सिंह !" अत्यन्त विस्मय से राजा ने कहा !

"हाँ ! उस ने मुझ से साफ कह दिया है कि विक्रम के बजाय वह गुलाब को पसन्द करती है।"

"किन्तु यह कैसे हो सकता है रानी ? कमलिनी ने कुल की मर्यादा पर भी ध्यान नहीं दिया। उस ने राजा के घर में जन्म लिया है। उसे किसी राजकुमार को अपना पति चुनना होगा। इसीलिये तो हम विक्रम को टाल रहे हैं।"

"महाराज ! उसे वीर पुरुष चाहिये जो उस की रक्षा कर सके। कहती है क्षत्रिय का आदर उस के पुरुषार्थ से होता है धन दौलत से नहीं। गुलाब सिंह के वीर होने में तो आप को भी सन्देह नहीं हो सकता और उस को अधिक आदर देना आप के हाथ की बात है। इस के अतिरिक्त यदि आप गुलाब सिंह से नाराज़ हुए तो वह भी विद्रोह कर सकता है।"

"संभव है रानी ! तुम ठीक कहती हो। गुलाब सिंह हमें एक नई मुसीबत मालूम होता है। अब तक तो हम विक्रम को ही शत्रु समझते थे। अब तो गुलाब भी एक काँटा बन गया। हमें जल्दी ही अपनी कन्या किसी राजा को देनी होगी वर्ना हमारा सारा राज्य नष्ट भ्रष्ट हो सकता हैं। यदि कमलिनी गागरोन में ही रही तो कोई न कोई विद्रोह यहाँ सदैव होता रहेगा और यदि कोई आक्रमण भी हो जाये तो कोई आश्चर्य की बात नहीं।"

इतने में एक दासी ने आकर कहा—"अन्नदाता जी, एक गुप्तचर आया है। आवश्यक कार्य से दर्शन की प्रार्थना कर रहा है।"

"अच्छा, हम उस से अभी मिलेंगे।"

रानी को वहीं छोड़ कर नरेन्द्र एक अलग कमरे में पहुँचे

और गुप्तचर को बुलवाया।

"क्यों रामदास ! क्या हाल है ?"

"अन्नदाता जी, समाचार अच्छा नहीं है। कुमार विक्रम सिंह जी, अभी रात को अपने पाँच सौ सैनिकों को साथ लेकर नगर से प्रयाण कर गये हैं।

महाराज चुप हो गये। "अच्छा तुम जाओ" वे बोले। गुप्तचर सिर झुका कर चला गया।

विक्रम के विद्रोह का समाचार सुनते ही क्रोध से नरेन्द्र का चेहरा लाल हो गया। वे मन में कहने लगे—"उस उदण्ड ने आखिर वही किया जिस की हमें आशंका थी। यदि उस का शीघ्र दमन न किया गया तो सारे राज्य में अशान्ति फैल जायेगी।"

रात अधिक हो चली थी ! नदी का कलकल शब्द सुनाई पड़ रहा था। बड़ी देर तक नरेन्द्र चिन्ता-मग्न अवस्था में करवटें बदलते रहे। विक्रम और गुलाब दोनों उन के आगे दो समस्याओं के रूप में आते थे और चले जाते थे। धीरे धीरे वे निद्राधीन हो गये।

× × ×

"राजकुमारी जी, राजकुमारी जी।"

"क्या बात है चम्पा ! आज सुबह सुबह इतनी घबराई हुई क्यों है ?"

"आप ने सुना, अभी दस बजे राज दरबार लगने वाला है।"

"क्यों" कमलिनी ने पूछा।

"महाराज को मंत्रियों और सेनाध्यक्षों से परामर्श करना है। विक्रमसिंह विद्रोही हो कर चला गया है।"

"अच्छा ?"

कुछ देर में कान्ति भी आ गई। राजकुमारी ने कहा—"तूने सुना कि राज-दरबार लगने वाला है ?"

"हाँ राजकुमारी जी, अभी चम्पा ने बताया" उस ने उदास हो कर कहा।

"तू जिस की इतनी प्रशंसा करती थी वह तो ऐसा पापी निकला कि राज्य से द्रोह करने में उसे तनिक भी लज्जा नहीं आई।"

"क्या कहूँ," कान्ति बोली—"उस का भाग्य ही उस से रूठा हुआ लगता है। चलिये ऊपर चल कर गवाक्ष से देखें। राज-दरबार तो मैदान में लग रहा है। विवरण सुनने के लिये चम्पा को भेज दीजिये।

"अच्छा, चलो।"

विक्रमसिंह के चले जाने का हाल प्रधान मंत्री को प्रातः काल बहुत जल्दी ज्ञात हो गया। महाराज के क्रोध का उन्हें भय था। कहीं वे उसे राजद्रोह के अपराध में प्राणदण्ड न दे डालें। उन्होंने दरबार लगने से पूर्व ही दुर्ग में जाकर एकान्त में राजाधिराज से भेंट करना उचित समझा। सेवा में उपस्थित होकर वे बोले—"बड़ा अनर्थ हो गया महाराज! विक्रम का लड़कपन आप से छिपा नहीं है।"

"मुझे सब सूचना मिल चुकी है मंत्री जी। किन्तु विद्रोहिओं का दमन करना हम अपना कर्त्तव्य समझते हैं।"

"ऐसा ही उचित है पृथ्वीनाथ" बैरीसाल आँखों में आँसू भर कर कहने लगे "किन्तु विक्रम मेरा एक ही पुत्र है अन्नदाता जी! उस के प्राणों की भीख माँगता हूँ। यही मेरी अन्तिम भिक्षा है। महाराज उदार हैं। मेरे घर को सर्वनाश से बचाना आप के हाथ है। आप की आज्ञा मिलते ही मैं स्वयं उसे बन्दी बना कर आप की सेवा में प्रस्तुत कर सकता हूँ और भविष्य में ऐसा कभी नहीं करने की प्रतिज्ञा करा सकता हूँ। महाराज उसे

प्राण दण्ड न दिया जाये, यही मेरी अंतिम प्रार्थना है।"

नरेन्द्र ने कहा—"आप के वंश का हम बहुत सम्मान करते हैं मंत्री जी। आप के पूर्वज राज्य के लिये कई युद्धों में बड़ी वीरता से काम आये हैं इस बात को हम कभी नहीं भूल सकते। हम विक्रम को प्राणदण्ड नहीं देंगे किन्तु उसे वन्दी बनाना आवश्यक है। चलिये अब राज दरबार का समय हो रहा है।"

"जैसी महाराज की आज्ञा।"

गागरोन के अधिपति का आलीशान दरबार लगा हुआ था। सभा के आस पास हज़ारों नागरिक महाराज के दर्शन के लिये खड़े हुए थे। सब ओर विक्रम की ही चर्चा हो रही थी। अनेक नवयुवक राजकुमारी के सौन्दर्य की चर्चा में लीन थे। कुछ वृद्ध पुरुष विक्रम को राजद्रोही और पदलोलुप कह कर धिक्कार रहे थे और उन के विपरीत कुछ युवक उस के साहस की सराहना कर रहे थे।

राज दरवार में गणिका का नृत्य हो रहा था। उस के भाव-प्रदर्शन, मधुर कण्ठ और पायल की तालवद्ध झंकार ने सव को अपनी ओर मोह रखा था। सभासद अपने अपने आसनों पर प्रस्तर प्रतिमाओं की भाँति मौन वैठे हुए थे। नृत्य समाप्त होने के वाद राजसभा वुलाने के विषय की चर्चा हुई। कई सभासदों ने राजद्रोह के अपराध में विक्रमसिंह को प्राणदण्ड देने की सलाह दी। प्रधान मंत्री सिर लटकाये गुमसुम वैठे थे।

अंत में महाराज ने स्वयं कहा—"इस से पहले कि विक्रमसिंह को दण्ड दिया जाये, उसे वन्दी वना कर यहाँ प्रस्तुत करना आवश्यक है। इस कार्य के लिये हम अश्वारोहिणी के नायक गुलाबसिंह को आज्ञा देते हैं कि वे दो सौ घुड़सवारों को साथ

"हाँ राजकुमारी जी, अभी चम्पा ने बताया" उस ने उदास हो कर कहा।

"तू जिस की इतनी प्रशंसा करती थी वह तो ऐसा पापी निकला कि राज्य से द्रोह करने में उसे तनिक भी लज्जा नहीं आई।"

"क्या कहूँ," कान्ति बोली—"उस का भाग्य ही उस से रूठा हुआ लगता है। चलिये ऊपर चल कर गवाक्ष से देखें। राज-दरबार तो मैदान में लग रहा है। विवरण सुनने के लिये चम्पा को भेज दीजिये।

"अच्छा, चलो।"

विक्रमसिंह के चले जाने का हाल प्रधान मंत्री को प्रातः काल बहुत जल्दी ज्ञात हो गया। महाराज के क्रोध का उन्हें भय था। कहीं वे उसे राजद्रोह के अपराध में प्राणदण्ड न दे डालें। उन्होंने दरबार लगने से पूर्व ही दुर्ग में जाकर एकान्त में राजाधिराज से भेंट करना उचित समझा। सेवा में उपस्थित होकर वे बोले—"बड़ा अनर्थ हो गया महाराज! विक्रम का लड़कपन आप से छिपा नहीं है।"

"मुझे सब सूचना मिल चुकी है मंत्री जी। किन्तु विद्रोहिओं का दमन करना हम अपना कर्त्तव्य समझते हैं।"

"ऐसा ही उचित है पृथ्वीनाथ" बैरीसाल आँखों में आँसू भर कर कहने लगे "किन्तु विक्रम मेरा एक ही पुत्र है अन्नदाता जी! उस के प्राणों की भीख माँगता हूँ। यही मेरी अन्तिम भिक्षा है। महाराज उदार हैं। मेरे घर को सर्वनाश से बचाना आप के हाथ है। आप की आज्ञा मिलते ही मैं स्वयं उसे बन्दी बना कर आप की सेवा में प्रस्तुत कर सकता हूँ और भविष्य में ऐसा कभी नहीं करने की प्रतिज्ञा करा सकता हूँ। महाराज उसे

प्राण दण्ड न दिया जाये, यही मेरी अंतिम प्रार्थना है।"

नरेन्द्र ने कहा—"आप के वंश का हम बहुत सम्मान करते हैं मंत्री जी। आप के पूर्वज राज्य के लिये कई युद्धों में बड़ी वीरता से काम आये हैं इस बात को हम कभी नहीं भूल सकते। हम विक्रम को प्राणदण्ड नहीं देंगे किन्तु उसे बन्दी बनाना आवश्यक है। चलिये अब राज दरबार का समय हो रहा है।"

"जैसी महाराज की आज्ञा।"

गागरोन के अधिपति का आलीशान दरबार लगा हुआ था। सभा के आस पास हज़ारों नागरिक महाराज के दर्शन के लिये खड़े हुए थे। सब ओर विक्रम की ही चर्चा हो रही थी। अनेक नवयुवक राजकुमारी के सौन्दर्य की चर्चा में लीन थे। कुछ वृद्ध पुरुष विक्रम को राजद्रोही और पदलोलुप कह कर धिक्कार रहे थे और उन के विपरीत कुछ युवक उस के साहस की सराहना कर रहे थे।

राज दरबार में गणिका का नृत्य हो रहा था। उस के भाव-प्रदर्शन, मधुर कण्ठ और पायल की तालबद्ध झंकार ने सब को अपनी ओर मोह रखा था। सभासद अपने अपने आसनों पर प्रस्तर प्रतिमाओं की भाँति मौन बैठे हुए थे। नृत्य समाप्त होने के बाद राजसभा बुलाने के विषय की चर्चा हुई। कई सभासदों ने राजद्रोह के अपराध में विक्रमसिंह को प्राणदण्ड देने की सलाह दी। प्रधान मंत्री सिर लटकाये गुमसुम बैठे थे।

अंत में महाराज ने स्वयं कहा—"इस से पहले कि विक्रम-सिंह को दण्ड दिया जाये, उसे बन्दी बना कर यहाँ प्रस्तुत करना आवश्यक है। इस कार्य के लिये हम अश्वारोहिणी के नायक गुलाबसिंह को आज्ञा देते हैं कि वे दो सौ घुड़सवारों को साथ

लेकर विक्रमसिंह का पीछा करें और जल्दी से जल्दी उसे बन्दी बना कर हमारे सामने पेश करें।"

"महाराज की आज्ञा" गुलाब ने सभा में उठ कर सिर झुकाया।

नरेन्द्र ने फिर आदेश दिया—"कल प्रभात में ही तुम्हें यहाँ से प्रस्थान करना है गुलाबसिंह। इसमें देर न हो। साथ ही तुम्हें और तुम्हारे सैनिकों को हम चेतावनी देते हैं कि कोई भी व्यक्ति विक्रमसिंह के प्राण लेने का प्रयत्न न करे। विद्रोही होने पर भी वह हमारे राजभक्त मंत्री वैरीसाल जी का इकलौता लड़का है! यदि किसी व्यक्ति ने हमारी आज्ञा का उल्लंघन किया तो उसे कठोर से कठोर दण्ड दिया जायेगा।"

"जो आज्ञा महाराज" गुलाबसिंह ने फिर सिर झुकाया।

सभा विसर्जित हुई। महाराज की प्रशंसा करते हुए नागरिक अपने घर जा रहे थे। कुछ लोग असन्तुष्ट भी थे। कहत थे "यह कहाँ का न्याय है। प्रधान मंत्री का पुत्र होने के कारण विक्रम को प्राण दण्ड नहीं मिलेगा। यदि हम विद्रोह करें तो फौरन फाँसी पर लटका दिये जायें।"

एक ने कहा—"भाई, हमें इन बातों से क्या पड़ी है। राजा जाने और उस के सैनिक जाने। हमारी तरफ से कोई राजा बने या डाकू। हम तो वही कंगाल के कंगाल रहते हैं।"

× × ×

थोड़ी देर में चम्पा अंतःपुर में पहुँची और कमलिनी को सब समाचार विदित हुए। चतुर राजकुमारी बड़ी देर तक सोचती रही। कान्ति ने कहा—"चिन्ता न कीजिये राजकुमारी जी। वीर नायक तो एक बार पहले भी डाकुओं का दमन कर

चुके हैं।"

कमलिनी बोली—"विक्रमसिंह के साथ क्या पाँच सौ सैनिक हैं ?"

"हाँ।"

"और महाराज कितने लोग भेज रहे हैं ?"

"दो सौ।"

"हूँ !" कह कर वह फिर चुप हो गई।

अभिप्राय समझती हुई कान्ति बोली—"कहीं महाराज ने एक वार से दो शिकार की तो नहीं सोची है।"

"ऐसा न कहो कान्ति" एक लम्बी साँस खींच कर उस ने कहा—"भगवान् सब का रक्षक है। हमारी लाज वही रखेगा।" चम्पा की ओर संकेत कर उस ने कहा—"चम्पा ! तुझे एक संदेश ले जाना है। कल तो वे जा ही रहे हैं।"

× × ×

संध्या हो चली थी। गुलाब और मदन मकान के नीचे की मंजिल में बैठे हुए धीरे धीरे परामर्श कर रहे थे। गुलाब म्लान और चिन्तित सा बैठा हुआ था और मदन बहुत उद्विग्न और चिढ़ा हुआ था। वह बोली— "आखिर यह राजा चाहता क्या है ? उस ने इतना भी नहीं सोचा कि पाँच सौ सैनिकों के विपक्ष में दो सौ से कैसे काम चलेगा।"

"हम क्यों इस की चिन्ता करें मदन। राजा की आज्ञा मानना हमारा धर्म है। स्वामी के आदेश पर मर मिटने में ही हमारा गौरव है।"

"वाह, हम क्या गाजर मूली हैं जो इस तरह कटते फिरें" मदन ने कहा—"ऐसे वाहियात हुक्म को जो माने वह मूर्ख नहीं तो और क्या है ?"

"मरना तो एक दिन है ही, मदन। फिर इस शरीर से क्यों इतना मोह किया जाये ?"

"गुलाब ! तुझे अपनी नहीं तो राजकुमारी की तो चिन्ता होनी चाहिये। तू अपनी मौत के साथ क्या उस की मौत भी बुलाना चाहता है ?"

इतने ही में चम्पा वहाँ आ पहुँची।

"यही चम्पा है मदन जिस की मैं तुझ से प्रशंसा करता रहता हूँ," फिर गुलाब चम्पा से बोला—"यह मेरा मित्र मदनसिंह है चम्पा। जो बात तू मेरे सामने कहती है वह इस के आगे भी कह सकती है।"

"बड़ी खुशी हुई आप से मिल कर" चम्पा ने कहा।

"खुशी तो मुझे ज्यादा है।"

"सो कैसे ?"

"यह मैं अभी बताऊँगा", मदन ने कहा—"पहले तुम जो कहने आई हो वह कह लो।"

तब गुलाब की ओर मुँह कर के चम्पा बोली—"राजकुमारी ने आप को याद फरमाया है कुमार ! कल तो आप प्रयाण कर रहे हैं। अतः आज वे आप की प्रतीक्षा करेंगी।"

"जो आज्ञा। और कुछ सेवा ?"

"बस, यही आदेश है। कहती थीं, पता नहीं भविष्य में क्या हो जाये। अभी तो नदी में बाढ़ आ रही है।"

"आज मुझे भी कुछ कहना है चम्पा" मदन ने मुस्कराते हुए कहा।"

"कहिये" चम्पा ने लजा कर कहा। मदन के हास्य से वृद्ध दासी के ओठों पर भी नवोढ़ा की सी मुस्कराहट दौड़ गई। स्त्रियाँ व्यवहार में कितनी ही दक्ष हों, प्रेम-वार्ता के समय संकु-

चित हुए बिना नहीं रह सकतीं।

मदनसिंह ने कहा—"हम ने सुना है राजकुमारी के पास कान्ति नाम की कोई सहेली रहती है।"

"हाँ,हाँ, बड़ी सुन्दर और चतुर लड़की है।"

"अच्छा तो उस से मेरा नमस्कार कहना और कह देना कि गुलाब के पास मदन रहता है।"

"वहा, क्या कहने हैं, जरूर कह दूँगी।"

गुलाबसिंह ने कहा—"इसे ज्यादा समझाने की जरूरत नहीं है, मदन। यह तुझ से कहीं अधिक समझदार है।"

"हाँ हाँ, यह तो मेरी नानी है। क्यों नानी! आज से मैं तुम्हें नानी कहूँगा।"

गुलाब वोला—"वाह रे, बड़ी जल्दी रिश्तेदार बन गया। इस की मिठाई कब खिलायेगा।"

"चल, चल। तू अपना काम कर", मदन ने कहा।

"ठीक तो है कुमार! ईश्वर आप दोनो को प्रसन्न रखे। मुझ से जो सेवा हो सकेगी वह मैं अवश्य करूँगी" कह कर चम्पा चली गई।

★

छठा परिच्छेद

गगनपुर के नवाब फय्याज खाँ को कुश्ती देखने का बहुत शौक था। गगनपुर में बीसियों अखाड़े बने हुए थे। सैंकड़ों पहलवान नवाब को खुश करने और उस से इनाम पाने के लिये नित्य व्यायाम करते थे। मंगलवार के दिन दंगल की प्रथा प्राचीन काल से चली आती है। कभी-कभी नवाब खुद एक जलसा करता और पहलवानों की कुश्ती देखता था। ये पहलवान युद्ध-विद्या भी सीखते थे। पटा लकड़ी के पैंतरे बदलते थे और युद्ध के समय नवाब की सेना में बहुत काम आते थे।

आज भी एक ऐसा ही समारोह था। दर्शक गण पहलवानों को प्रोत्साहित कर रहे थे। बड़े-बड़े पहलवान ताल ठोक कर अखाड़े में उतरते और बड़ी उस्तादी के साथ एक दूसरे से चिपट जाते थे। बड़ी देर तक कुश्तियाँ होती रहीं। पुरस्कार-वितरण के समय नवाब के कृपा पात्र नौकर छीतर खाँ ने उसे सूचित किया कि एक भेदिया गागरोन का कुछ हाल मालूम करके आया है।

गागरोन का नाम सुनते ही नवाब की बाछें खिल गईं। सोचा—"जरूर वहाँ की शहज़ादी का हाल होगा।" बोला—"अच्छा हम उस से अभी मिलते हैं।

झटपट उस ने इनाम बाँटने के बाद कहा—"शाबास, मुल्क के बहादरो। हमें बहुत खुशी है कि तुम सब अपने फन में तरक्की कर रहे हो। आस-पास की रियासत के हालात बड़े नाज़ुक हैं। तुम्हारे जैसे जफाकश लोग ही हमारी हकूमत को बलन्द रख सकते हैं। जब कभी जंग होगी और तुम्हारे कारनामे हमारे सामने आयेंगे तो दुश्मनों के माल असबाब से तुम्हें निहाल कर दिया जायेगा।"

"हजूर का इक़बाल बलन्द रहे" प्रधान मल्ल बोला "हकूमत के लिये हम अपने खून का एक-एक कतरा बहाने को तैयार हैं।"

"मुझे तुम सब से यही भरोसा है" कह कर नवाब चला गया। तब उस ने फौरन भेदिये को बुलाया और पूछा—"क्यों गुलामअली, गागरोन की क्या खबर है?"

"गरीबनवाज़ मैं अभी सीधा वहीं से आरहा हूँ। हुजूर, वहाँ के दीवान बैरीसाल का लड़का बिकरमसिंह बागी होगया है। पाँच सौ सिपाही उस के साथ हैं। वहाँ की रियाया बड़ी परेशान है। राजा नरेन्दरसिंह ने गुलाबसिंह को चन्द सिपाहियों के साथ उसे ज़िन्दा गिरफ़्तार करने के लिये भेजा है।"

"बहुत खूब गुलामअली। बड़ी अच्छी खबर लाये" एक अशरफी उसे देते हुए नवाब ने कहा—"ये कम्बख्त आपस में लड़-लड़ कर मर जायें तो हमारा रास्ता साफ हो जाये" फिर धीरे से बोला—"यह तो बताओ, वहाँ की शहज़ादी की शादी के लिये क्या इन्तजाम किया गया है?"

"हुजूर अभी कोई इन्तज़ाम नहीं है।"

"बहुत खूब। अच्छा तुम जाओ।"

गुलामअली के जाने पर फैय्याज़ ने छीतरखाँ से कहा—

कूच करने का बड़ा अच्छा मौका है वर्ना फिर कोई और रुकावट पैदा हो जायगी। तुम्हारी क्या राय है छीतर खाँ ?"

"हुज़ूर का फर्माना बजा है—नेकी और पूँछ-पूँछ। लेकिन गरीबनवाज़, एक बात है। विक्रमसिंह और गुलाबसिंह दोनों खतरनाक आदमी हैं। अगर हम ने जंग शुरू की तो मुमकिन हैं कि वे दोनों राजा के पास लौट आयें। उन का वहाँ की रियाया पर बड़ा असर है और वे फौज भी बहुत जल्दी बढ़ा सकते हैं। खास कर गुलाब सिंह का हमें ज़ियादह खतरा है।"

नवाब ने कहा—"बिल्कुल दुरुस्त है, और फिर बारिश में तवालत भी काफी होगी। बेहतर यही होगा कि बिकरमसिंह की बगावत का अंजाम देखा जाये। तब तक बारिश भी ख़त्म हो जायेगी। मौका आने पर हम आँधी और तूफान की परवाह नहीं करते छीतर खाँ। हमें हमारी फौज की दिलेरी और हुब्बेवतनी पर पूरा एतबार है। मगर ठीक है कुछ दिन देखते हैं कि विकरमसिंह क्या गुल खिलाता है, फिर जैसा मुनासिब समझेंगे, वैसा करेंगे।"

★

सातवां परिच्छेद

रात हो रही थी। गागरोन में वर्षा के कारण सब लोग अपने घरों में बैठे हुए थे। आँधी, अंधकार और मेघ-गर्जन से वातावरण अशान्त और भयानक था। दो अश्वारोही सावधानी से अश्वों को बढ़ाये हुए चले जा रहे थे।

"आज तो कुछ दिखाई नहीं पड़ता गुलाब ! समझ में नहीं आता, तुम कैसे जा सकोगे ?"

"मैंने वहाँ पहुँचने का वादा किया है मदन ! वर्षा यदि थोड़ी भी कम हुई तो मैं नदी में कूद पड़ूँगा।"

कुछ देर बाद दोनों व्यक्ति निश्चित स्थान पर पहुँचे और घोड़ों से नीचे उतरे। वे वृक्ष के नीचे बैठ कर दुर्ग की ओर देखने लगे। सहसा तोप चलने का धड़ाका हुआ।

"बारह बज गये अभी तक कुछ पता नहीं" मदन ने ऊब कर कहा। उस जमाने में समस्त दुर्गों में दिन और रात के बारह बजे तोप चलाने की प्रथा थी।

गुलाबसिंह बोला—"मदन ! हम सवेरे तक यहीं बैठे रहेंगे चाहे कुछ भी हो। मुझे तो विश्वास है कि राजकुमारी आयेगी और हमें कुछ न कुछ संकेत अवश्य मिलेगा।"

× × ×

उधर कमलिनी को झरोखे में पहुँचने की चिन्ता हो रही थी। वर्षा के कारण वह अपने कक्ष से अभी तक नहीं निकल पाई थी किन्तु वहाँ पहुँचने का उस का दृढ़ निश्चय था। धीरे-धीरे दो बज गये। बारिश कुछ हल्की हुई। तीनों स्त्रियों ने कम्बल ओढ़ लिए। कमर में तलवारें बँधी हुई थीं।

"आज दीपक की लौ से काम नहीं चल सकता कान्ति। मशाल जलानी पड़ेगी।"

"कहीं कोई देख न ले राजकुमारी जी।"

उत्तर मिला—"कुछ भी हो, मुझे प्राणों की चिन्ता नहीं। वे अवश्य आयेंगे। मुझे विश्वास है।"

चम्पा ने अत्यन्त सावधानी से मशाल को सँभाला। दाहिने हाथ से कम्बल को कुछ दूर उस के ऊपर रख कर वर्षा से उसे बचाया। कान्ति ने तेल का पात्र हाथ में लिया। तीनों वहाँ से रवाना हुईं।

धीरे-धीरे वे सकुशल झरोखे के पास पहुँची। चम्पा का ध्यान बराबर मशाल की ओर था। कहीं ऐसा न हो कि वह बुझ जाये। झरोखे तक पहुँचते पहुँचते उसे ज़ोर से ठोकर लगी और वृद्धा दासी धड़ाम से नीचे गिर पड़ी। किन्तु गिरते समय भी उस ने मशाल को बुझने नहीं दिया और बाँया हाथ बराबर ऊपर रखा। उस के कम्बल में आग लग गई। राजकुमारी ने झपट कर कम्बल छीन लिया और नदी में फेंक दिया।

"वह देखो गुलाब" एकदम मदन ने खुशी से उछल कर कहा।

"इतना प्रकाश! कहीं कोई देख न ले" आश्चर्य से गुलाब ने कहा—"अच्छा अब मैं जाता हूँ। आज तो प्राणों की बाज़ी लगा दूँगा" कह कर वह नदी में कूद पड़ा।

इधर राजकुमारी ने अपना कम्बल उतार कर चम्पा को दिया और कहा—"ले इसे ओढ़ ले। रात भर पानी में ठिठुर जायेगी। पास में कहीं दुबक कर बैठ जा।"

"कम्बल के बिना आप भीग जायेंगी राजकुमारी जी" दासी बोली।

"अरे मैं तो झरोखे में बैठी हूँ। मेरा क्या बिगाड़ेगा? यह हल्की बौछार तो मुझे और भी सुहानी लग रही है।"

कमलिनी ने तेल का पात्र कान्ति से ले लिया और मशाल में थोड़ा तेल डाल कर कहा—"अच्छा, अब तुम जाओ।"

दोनों के जाते ही वह लहरों की ओर टकटकी लगा कर देखने लगी। प्रतीक्षा करते करते नवोढ़ा उद्विग्न हो उठी। मशाल हाथ में लेकर वह झरोखे में घूमने लगी।

कुछ देर बाद आवाज़ आई—"कमलिनी?"

"गुलाब" एक दम उत्तर मिला। लहरों को चीरता हुआ वह झरोखे से आ लगा था। झट से राजकुमारी ने उस का हाथ पकड़ा और ऊपर आने में सहायता की।

"आज तो प्राण गये ही होते प्रिये" आलिंगन करता हुआ वह बोला—"इन लहरों में ऐसा प्रवाह पहले कभी नहीं था। तुम्हारे प्रेम ने ही मुझे जीवित रखा है कमलिनी।"

"मैं कितनी भाग्यशालिनी हूँ जो मुझे तुम्हारे जैसा वीर पुरुष प्राप्त है। आज मैं तुम्हें नहीं जाने दूँगी" कहते कहते वह वीर नायक के दृढ़ और सुडौल शरीर से इस प्रकार लिपट गई जैसे हवा चलने पर कुसमित लता वृक्ष से लिपट जाती है।

बौछार में भीगने से राजकुमारी का कोमल शरीर और भी कोमल हो गया था। हृदय की कोमलता वाणी से मुखरित हो रही थी। उस के कर-पल्लवों द्वारा गुलाब के कंधों का स्पर्श

होने से कुछ ही क्षण में युवक की सारी थकान दूर हो गई।

"इतना प्रकाश बहुत अनर्थकारी होता है कमलिनी" मशाल नदी में फेंक कर उस ने कहा।

"आज उस के बिना काम नहीं चल सकता था गुलाब, और यदि कोई देख भी ले तो क्या है। प्राणों से अधिक और क्या हानि हो सकती है?"

"मेरे रहते किस की मजाल है जो तुम्हारी ओर देख सके कमलिनी। जो कुछ होना होगा उस से निबट लेंगे।"

बातें करते करते दोनों प्रेमी अंधकार में चुप हो गये। पवन के स्पर्श से वृक्षों का मरमर शब्द हो रहा था। पक्षी अपनी नीड़ों में सोये हुए थे। कमलिनी के कपोल गुलाब के स्पर्श से अधिक गुलाबी हो गये।

धीरे धीरे अंधकार कम होने लगा। कोयल बोलने लगी; कलियाँ प्रस्फुटित हो रही थीं। विदा माँगते हुए गुलाब ने कहा- "मैं शीघ्र ही लौटूँगा प्रिये। ईश्वर ने चाहा तो विक्रम अवश्य बन्दी हो जाएगा। वह मुझ से कब तक छिपता फिरेगा।"

"विक्रम के पास सैनिक अधिक हैं गुलाब! पूर्ण रूप से सचेत रहना। मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करती रहूँगी।"

गुलाब ने भाव विभोर होकर राजकुमारी को गले लगा लिया और गद्गद् कंठ से बोला—"विश्वास रखो कमलिनी! यदि जीवन शेष रहा तो फिर मिलूँगा।"

"देखो गुलाब! मुझे न भूल जाना। तुम्हारे बिना मेरा जीवन असंभव है" इस के आगे वह कुछ न कह सकी। कंठ भर आया। आँसुओं का वेग उस की दृष्टि को रोक रहा था। गुलाबसिंह नदी में कूद पड़ा।

★

आठवां परिच्छेद

प्रधान मंत्री वैरीसाल वेचैन होकर रात भर करवटें बदलते रहे। पुत्र की चिन्ता और वंश की उज्ज्वल कीर्ति में कलंक—यह दो घाव उन की छाती पर गहरे लगे थे। उन्होंने सोचा—महाराज ने भी गुलावसिंह को भेजा है जिस से विक्रम की शत्रुता है। गुलावसिंह पच्चीस वर्ष का वलिष्ट सेनानी है और मेरा पुत्र केवल इक्कीस वर्ष का अल्हड़ लड़का है। कहीं ऐसा न हो कि गुलावसिंह अपना रास्ता साफ करे। आखिर गुलाव भी तो राजकुमारी का इच्छुक है। जैसा विक्रम ने कहा, वह उस से प्रेम करता है। कल तो गुलावसिंह जा ही रहा है। यदि उस का राजकुमारी से तनिक भी प्रेम है तो आज वह उस से जरूर मिलेगा।"

प्रधान मंत्री की धारणा सत्य थी। वे अनुभवी और चतुर राजनीतिज्ञ थे। उन्होंने पहले ही चार भेदिये इस बात का पता लगाने के लिये नियुक्त कर दिये थे।

भेदिये रात भर दुर्ग के आस पास चक्कर लगाते रहे। एक भेदिया सूर्यद्वार की ओर नियुक्त था और दूसरा गुप्तद्वार की ओर। ये ही दो संभावित मार्ग थे। दोनों भेदियों को निराश लौटना पड़ा। किन्तु शेष दो भेदिये दूसरी ओर घूम रहे थे और इधर उधर रुक कर आहट ले रहे थे। संयोगवश उन

में से एक को घोड़ों की टापों की आवाज़ सुनाई दी। वह दौड़ता हुआ नदी के पुल पर पहुँचा। उस ने सोचा कि वे रात को गश्त लगाने वाले घुड़सवार होंगे किन्तु थोड़े ही आगे जा कर घोड़े पुल के बाईं ओर मुड़े। भेदिया नगे पांव दौड़ता जा रहा था। सहसा बिजली की चमक में उस ने गुलाबसिंह की पीठ को देखा। उस का अनुमान और भी दृढ़ हो गया किन्तु उस की समझ में न आया कि अश्वारोही उस भयंकर नदी के किनारे किस लिये जा रहे थे! कुछ देर में घोड़े रुक गये। भेदिया आड़ लेकर वहीं बैठ गया। कुछ बातचीत की आहट आ रही थी। एक घोड़े के थोड़ा सा खाँसने से वह ताड़ गया कि वह पास ही में कहीं बँधा हुआ था। बड़ी देर तक वह आश्चर्य में डूबा हुआ आँखें फाड़ कर देखता रहा।

कुछ देर में उसे ध्यान आया कि दुर्ग के इस ओर एक झरोखा है जो वीरान पड़ा रहता है। सारी बात उस की समझ में आने लगी और वह चौकन्ना हो कर इधर उधर देखने लगा।

उस ओर रात के दो बजे जब राजकुमारी ने जलता हुआ कम्बल नदी में फेंका तो भेदिया दाँतों तले उँगली दबा गया। "कैसा अद्भुत काण्ड है" उस ने मन ही मन में कहा—"नगर में तो किसी को स्वप्न भी न आता होगा इस ऊजड़ स्थान में ऐसी अद्वितीय सुन्दरी से प्रेम होता है जिस से बड़े बड़े राजा प्रेम की भीख माँगने के लिये तरस रहे हैं।"

थोड़ी देर में जब राजकुमारी मशाल हाथ में लेकर घूमने लगी तब तो उसे कोई सन्देह नहीं रहा और वह चुपचाप वहाँ से लौट आया।

प्रातः काल उस ने सारा हाल ज्यों का त्यों प्रधान मंत्री को

कह सुनाया। वैरीसाल भी चकित रह गये। कुछ क्षण तक विस्मय से देखने के बाद उन्होंने प्रश्न किया—"यह भी तो संभव हो सकता है कि कोई प्रहरी वहाँ आया हो।"

"नहीं पृथ्वीनाथ, प्रहरी पागल नहीं है जो वर्षा में वहाँ आये और अपने पास के प्रकाश को नदी में फेंक दे। पहले तो कोई जलता हुआ वस्त्र नदी में फेंका गया। उस के कुछ देर बाद हाथ में मशाल ले कर कोई वहाँ घूम रहा था जो निश्चय ही किसी को बुलाने का संकेत था। मैं तो यहाँ तक कहने को तैयार हूँ कि वह कोई पुरुष नहीं था—स्त्री थी, क्योंकि जो रोशनी नज़र आती थी वह धीमी गति से इधर उधर हिल रही थी। यदि वहां कोई प्रहरी होता तो मशाल ले कर इतने धीरे धीरे नहीं घूमता।"

"क्या तुम ने गुलाबसिंह को देखा था ?"

"हाँ अन्नदाता जी, बिजली की कौंध में मैंने उन की पीठ देखी है। पीठ पर ढाल नहीं बँधी थी। इस से और भी निश्चय हो जाता है कि उन्हें पानी में उतरना था।"

प्रधान मंत्री ने प्रसन्न हो कर कहा—"शाबाश ! यह लो तुम्हारा पुरस्कार।" उन्होंने उसे दो अशर्फियाँ दीं।

भेदिये के जाने पर चतुर मंत्री ने यह हाल तुरन्त राजाधिराज को सूचित करना उचित समझा ताकि उन्हें गुलाबसिंह पर क्रोध आये और उस के विनाश का जल्दी से जल्दी प्रबन्ध किया जा सके।

× × ×

राजकुमारी कमलिनी के अधरों पर मन्द मुस्कान दौड़ रही थी। यद्यपि वियोग का ध्यान आने पर वह मलिन हो जाती थी तथापि मिलन की स्मृति इतनी छाई हुई थी कि उस का मुख बार बार पुलकित हो उठता था और नेत्र प्रफुल्लता से चमक

उठते थे। उषा काल से कुछ समय पहले ही वह अपने शयनागार में आ पाई थी। रात भर के जागरण से वह मदालसा की भाँति शय्या पर लेटी हुई थी किन्तु मन की प्रसन्नता के कारण उस की स्फूर्ति कम न हुई और कुछ देर बादउस ने शय्या-त्याग उचित समझा। पलँग पर बैठी हुई अगड़ाई लेने लगी। आँखों में नींद भरी थी और अन्तर में प्रिय की याद। कान्ति और चम्पा तो अपनी कमर भी सीधी न कर पाई थीं। रात भर की थकान के बाद भी वे सवेरे अपना काम करने लगीं। कुछ देर में कान्ति बोली— "स्नान का समय हो गया है राजकुमारी जी" उस की पलकें भारी हो रही थीं "चलिये जल-विहार से आप की थकान मिटानी पड़ेगी।"

दोनों सहेलियाँ स्नान के निमित्त बने हुए छोटे से सुन्दर जलाशय पर गईं। दोनों युवतियों की कोमल देह लहराती हुई स्वर्ण लताओं की भाँति स्वच्छ जल में सुशोभित होने लगी। झीने वस्त्र भीगने पर देह से चिपट गये मानो दो अप्सरायें जल-विहार कर रहीं थीं। श्वास प्रश्वास से वक्षस्थल उभरते और सिमट जाते थे। कमलिनी की ओर बार बार छींटें उड़ा कर कान्ति उसे अधिक प्रसन्न करने की चेष्टा कर रही थी। तैरते तैरते राजकुमारी तट पर आकर बैठ गई।

"क्यों अभी से थक गईं। वीर नायक तो नदी को पार कर जाते हैं।"

राजकुमारी मंत्रमुग्धा सी लहरों की ओर देखने लगी। गुलाब के प्रस्थान का दृश्य आँखों में घूम रहा था। सहसा कान्ति मस्त होकर गाने लगी—

"आज तो प्रिय जा रहे हैं।

मौन क्यों सारी दिशायें, मौन क्यों कुसमित लतायें,
भृंग उड़ते जा रहे हैं, अश्रु भर भर आ रहे हैं।"

युवती का लचीला और मधुर कण्ठ राजकुमारी के हृदय में दर्द पैदा कर रहा था। उस का अंग अंग मानो गीत के स्वरों के साथ झूम रहा था। गाते गाते कान्ति भी तन्मय होने लगी। गीत पूरा होने पर भी वह पगली की तरह राजकुमारी की ओर देख रही थी। कमलिनी ने उसे पकड़ कर जल में ढकेला और स्वयं भी कूद पड़ी मानो वह गुलाव का अभिनय कर रही थी।

"क्यों राजकुमारी जी! इतनी भीगने पर भी अभी पेट नहीं भरा। कहीं सर्दी न लग जाये।"

"कमलिनी हँसती हुई वोली—"मुझ से ज्यादा तो तू भीगी है। तू तो रात भर भीगती रही।"

दोनों हँसने लगीं। राजकुमारी के वस्त्र लिये हुए चम्पा किनारे पर खड़ी हुई थी। अवसर ठीक जान कर वह फौरन बोल पड़ी—"आप को मालूम हो क्या है। मदनसिंह जी का नाम सुना है आप ने?"

"कौन मदनसिंह?"

बड़ी उत्सुकता से राजकुमारी जल के बाहर आ गई। अब चम्पा ने अपना वाक्-चातुर्य वतलाया। कान्ति की ओर संकेत कर वोली—"वीर सेनानायक गुलाबसिंह जी के परम प्रिय और इष्ट मित्र श्रीमान् मदनसिंह जी ने कल इन से नमस्कार कहलाया था।"

कमलिनी प्रसन्नता से खिल उठी।

"क्यों उपहास करती है चम्पा" कान्ति ने शरमा कर कहा।

"उपहास नहीं, सच कहती हूँ।"

"हाँ, हाँ, यह तो कोई गूढ़ बात मालूम होती है।"

"राजकुमारी जी, मैं सच कह रही हूँ।"

"तब तो बड़ी खुशी की बात है" कमलिनी बोली—"इस की खुशी में आज हम दावत दगी। मुझे याद है एक बार उन्होंने मुझ से कहा था कि जब वे इधर आते हैं तो उन का मित्र वहाँ उन की प्रतीक्षा करता है।"

"बस वे ही मदनसिंह हैं। ईश्वर आप चारों को सुखी रखे" वृद्धा ने आशीष देते हुए दोनों युवतियों को खुश कर दिया और वे दोनों एक दूसरे से मीठी मीठी बातें करती हुई चली गईं।

× × ×

संध्योपासना के पश्चात् महाराज नरेन्द्रसिंह सिंहासनारूढ़ हो कर राज्य कार्य में लग जाते थे। आज भी वे गम्भीर रूप से राजपत्रों को देख रहे थे। इतने में द्वारपाल ने आकर कहा-- "अन्नदाता जी। प्रधान मंत्री दर्शन के लिये प्रस्तुत होना चाहते हैं।"

"बुलाओ।"

"पृथ्वीनाथ" मंत्री ने आते ही प्रणाम किया।

उठ कर अभिवादन का उत्तर देते हुए नरेन्द्र ने कहा— "आइये मंत्री जी, राज्य के क्या समाचार हैं?

"सब ओर शान्ति है महाराज। आप की कृपा है।"

राज्य-कार्य की चर्चा होने लगी। इधर उधर का प्रसंग बदलते हुए वृद्ध मंत्री ने कहा—"महाराज। अपराध क्षमा हो तो कुछ निवेदन करूँ।"

"निशंक हो कर कहिये।"

"अन्नदाता जी! गुलाबसिंह की स्पर्धा दिन पर दिन बढ़ती जा रही है। मुझे आज ही गुप्तचर से एक रोमांचकारी घटना

का पता लगा है जिस से मेरा हृदय काँप उठा है। महाराज को तो विदित ही है कि दुर्ग में नदी की ओर एक झरोखा है जो वीरान पड़ा रहता है।"

"हाँ, हाँ, !" नृपति ने विस्मय से कहा।

"गत रात्रि को वहाँ एक मशाल जल रही थी।"

"अच्छा ?" आश्चर्यचकित हो कर वे बोले।

"महाराज ! गुप्तचर ने अपनी आँखों से देखा कि वहाँ पहुँचने के लिये गुलाबसिंह नदी में कूद पड़ा।"

"किन्तु उस ओर से आने की चेष्टा करना तो प्राणों से हाथ धोना है मंत्री जी और आजकल बाढ़ के कारण नदी का का प्रवाह कितना भयंकर है।"

"पृथ्वीनाथ ! गुलाबसिंह के लिये यह कार्य असंभव नहीं। गुप्तचर ने तो यहाँ तक देखा कि मशाल हाथ में लेकर कोई स्त्री वहाँ घूम रही थी। कुछ देर बाद मशाल नदी में फेंक दी गई।"

"ओह, यदि यह सत्य है तो निश्चय ही बड़ी अनर्थकारी बात है। हमें जिस की आशंका थी कहीं वैसा ही न हुआ हो। मंत्री जी, इस घटना को बिल्कुल गुप्त रखिये। इस का पता लगाने का भार हम स्वयं अपने ऊपर लेते हैं।"

"जो आज्ञा महाराज !" मंत्री मन ही प्रसन्न हो रहे थे। उन्हें जो कुछ कहना था उसे राजाधिराज बहुत जल्दी समझ गये थे। कुछ सोच कर नरेन्द्र धीरे से कहने लगे—"गुलाब दिन पर पर दिन कँटीला होता जा रहा है। हमें क्या मालूम था मंत्री जी कि इस के काँटे इतने विषैले हैं। अब हमें जल्दी ही इस से हाथ बचाना होगा वर्ना उलझने पर सुलझना कठिन हो जाता है।"

और अधिक नमक मिर्च लगाते हुए वैरीसाल बोले "महाराज देखने में तो वह बहुत सीधा सादा और बड़ा सुशील युवक लगता है।"

शिष्टाचार की बातों के बाद प्रधान मंत्री विदा लेकर चले गए।

× × ×

भोजन का समय हुआ। कमलिनी और कान्ति अपने कक्ष में पास पास बैठ कर भोजन कर रही थीं। कमलिनी ने अपने भाई महेन्द्र को भी पास बिठा रखा था। खाते खाते चंचल बालक चुप नहीं रहता। बोला—"जिज्जी। भोजन बड़ा मजेदार बना है। ये लड्डू किस ने बनाये हैं ?"

दोनों मुस्कराने लगी। कान्ति ने कहा—"आप की जिज्जी ने बनाये हैं कुमार। आज हम ने दावत की है। आप को न्यौता दिया है।

"क्यों ? हमें क्यों न्यौता दिया ? हमारी माँ को क्यों नहीं दिया ?"

"कुमार आप हमारे लड्डू पसन्द करते हैं इसलिये आप को हम बुलाती हैं, वे कहाँ पसन्द करती हैं।"

राजकुमारी ने हँस कर बात बदलते हुए कहा "क्यों भैय्या ! तुम बड़े हो जाओगे तब कितने शेर मारोगे ?"

"एक सौ बीस" अबोध बालक ने जोर से कहा। दोनों खिलखिला कर हँसने लगीं।

"और अपनी रानियों को भी शिकार खेलने ले जाओगे ?" राजकुमारी ने कहा।

"हाँ, हाँ, क्यों नहीं।"

"और उन्हें लड्डू खिलाओगे या नहीं" कान्ति ने पूछा।

"नई"

"अरे उन्हें नहीं खिलाओगे तो फिर किसे खिलाओगे ?" कान्ति ने फिर पूछा।

"तुम्हें ! क्योंकि तुम हमें खिलाती हो।"

दोनों फिर हँसने लगीं।

इधर महाराज नरेन्द्रसिंह भोजन के समय रानी के पास आये। राजकुमार को वहाँ न देख कर बोले—"क्यों कुसुम, महेन्द्र कहाँ हैं ?"

"महाराज ! वह कमलिनी के साथ खाना खा रहा है।"

"क्यों, आज हमारे साथ नहीं खायेगा ?" नरेन्द्र तो उधर जाने का बहाना ढूँढ ही रहे थे। बोले—"हम स्वयं उसे बुला लाते हैं और कमलिनी को भी हमारे साथ ही खिलायेंगे" यह कह कर वे उस ओर बढ़े।

चम्पा ने तुरन्त सूचित किया—"महाराज पधार रहे हैं।"

राजकुमारी सहम गई। दोनों सखियाँ सहसा चुप हो गईं और साड़ी सिर पर खींच कर बैठ गईं।

"क्यों महेन्द्र ! आज हमारे साथ खाना नहीं खाओगे ?"

"पिता जी, हमें जिज्जी बुला लाईं। आप भी तो खाइये" कह कर उस ने लड्डूवाला हाथ ऊँचा किया।

"बड़ा मजेदार बना है। जिज्जी ने खुद बनाया है" अबोध बालक ने साफ कह दिया।

"जिज्जी ने बनाया है" चम्पा की ओर देखते हुए राजाधिराज ने कहा—"नौकरानियाँ क्या मर गई थीं ?"

इस से पहले कि चम्पा कुछ कहे, बालक फिर बोला—"पिता जी ! जिज्जी ने हमें दावत दी है।"

"दावत दी है ? यह किस लिये कान्ति" उन्होंने कुछ हँस

कर कमलिनी की सहेली से पूछा। महाराज ऐसी छोटी-छोटी बातें कभी नहीं पूछते थे किन्तु आज तो वे और ही उद्देश्य से आये थे।

कान्ति सुट्ट थी। घबरा कर उस ने अपनी गर्दन झुका ली परन्तु चतुर राजकुमारी बात बना कर बोली—"पिता जी, वर्षा आने पर भी हम अभी तक झूला नहीं झूले। आज मौसम अच्छा है। रात को बारिश भी खूब हुई। हम ने आज दावत देने और झूला झूलने की सोची है।"

"यह तो बड़ा अच्छा है बेटी! खूब खेलो और खूब झूलो। क्यों महेन्द्र! तुम भी झूला झूलोगे।"

"हाँ,हाँ," लड्डू खाते खाते वह बोला।

"और हमें भी झुलाओगे?"

"हाँ,हाँ"

इसी प्रकार इधर उधर की बातें कर के महाराज लौट गये। लाख कोशिश करने पर भी भोली कमलिनी अपने आप को अनुभवी नरेन्द्र की आँखों से नहीं छिपा सकी। वे पहली ही दृष्टि में ताड़ गये थे। उन्होंने देखा कि कमलिनी की आँखें अलसाई हुई थीं। वे अधिकतर नीची थीं और आज उन में पहले जैसी धवलता न थी। वे कुछ रतनारी और मदभरी सी लगती थीं। कपोल कुछ उभरे और कुछ अरुण थे। पलकों के नीचे एक दबी हुई लज्जा थी और कंठ में अधिक माधुर्य। शरीर और वाणी में नित्य की सी शिशुता के बजाय आज तारुण्य की सी गम्भीरता दीख पड़ती थी। उस की सहेली मौन थी। राजकुमारी के स्वर में संकोच अधिक था और स्पष्टता कम। महाराज के प्रश्न करने पर उस की दृष्टि संभ्रम थी मानो उसकी कोई बहुमूल्य वस्तु खो गई हो। नरेन्द्र को एक ही दृष्टि में यह

सारा इतिहास ज्ञात हो गया।

उन के जाते ही राजकुमारी ने एक गहरी साँस ली मानो हाथ में पकड़ी हुई चिड़िया को मुक्त कर दिया गया हो। वृद्ध चम्पा से न रहा गया और वह दोनों को सम्बोधित कर बोली—"देखो! महाराज के आगे सचेत रहा करो। सावधानी और स्वाभाविकता से उत्तर दिया करो। चेहरे पर घबराहट नहीं होनी चाहिये।"

"तू ठीक कहती है चम्पा" कान्ति ने समर्थन किया।

× × ×

राजधिराज रानी के पास जाकर चुपचाप बैठ गये। अनेक विचार उन के मस्तिष्क में तेजी से चक्कर लगा रहे थे। उन्होंने रानी को बड़े गौर से देखा और सोचने लगे। उन्हें रानी के यौवन के दिन याद आये—उस की अलसाई हुई आँखें, - इधर राजकुमारी की आँखें—वही लज्जा, वही भाव, वही दृष्टि, वही कंठ। "कितना सामंजस्य है" वे मन ही मन कह उठे। उन्होंने फिर रानी की ओर देखा।

"क्या सोच रहे हो महाराज" उन की आँखों में आँखें डाल कर रानी मुस्कराई।

"कुछ नहीं" नृपति ने गम्भीरता से कहा—"मेरी लड़की अब सयानी हो गई है।"

"मैंने तो पहले ही कई बार आप से निवेदन किया कि कमलिनी अब सयानी हो गई है।" कहीं उस के ब्याह का प्रबन्ध कीजिये!"

महाराज फिर चुप हो गये। पहले तो उन के जी में आया कि गुलाबसिंह की करतूत कह सुनायें किन्तु फिर सोचा—"अभी तो मुझे ही क्लेश है। यदि रानी को पता लगा तो उस के हृदय पर भी चोट लगेगी।" यही सोच कर वे मौन रहे। कुछ देर बाद बाहर चले आये।

दसवां परिच्छेद

"आज तो लूट का बहुत माल हाथ लगा है, अभयसिंह। ले, यह मोतियों का हार तू अपने लिए रख।" मोतियों का हार देख कर अभयसिंह के मुँह में पानी भर आया। आँखें चमकने लगीं।

विक्रम की खुशामद करता हुआ बोला— "मैं इसे ले कर क्या करूँगा कुमार। मुझे किसे पहनाना है?"

"तुझे मालूम नहीं अभय, कमलिनी के पास कान्ति नाम की एक सुन्दर सहेली है। बस मैं उसे तुझे ही सौंप दूँगा। यह हार उसी के लिए है।"

"जो आज्ञा कुमार" अभयसिंह ने सिर झुकाया और अंजलि में हार का दान ग्रहण किया "भगवान् करे, आप जुग-जुग जियें। ईश्वर आप को शक्ति दे, अधिकार दे।"

"अभी देखे जा अभयसिंह" विक्रम ने कहा— "इस मूर्ख राजा की सारी प्रजा को लूटते-लूटते कंगाल बना दूँगा। इस की सारी बुद्धि ठिकाने लगा दूँगा। देखता हूँ वह मेरी बात कब तक नहीं मानता।"

"कुमार! हम तो चाहते हैं कि आप ही गागरोन के राजा बनें। भगवान् करे वह दिन जल्दी आये। लेकिन आप हमें भूल तो नहीं जायेंगे?"

"नहीं, नहीं। तुझे कैसे भूल सकता हूँ अभयसिंह। तुझे अपना प्रधान सेनापति बनाऊँगा।"

यह सुन कर अभयसिंह खुशी से फ़ूल उठा। बोला- "सत्य कहता हूँ कुमार। आप की विजय के लिये मैं अपने प्राण न्यौछावर कर दूँगा" और अपनी छाती ठोक कर कहने लगा— "आप बड़े आदमी हैं और मैं एक ग़रीब सिपाही हूँ किन्तु अवसर आने पर बता दूँगा कि अपने मित्र के लिये अभयसिंह किस प्रकार अपनी जान दे सकता है।"

फिर वह प्रसंग बदल कर कहने लगा—"कुमार! आज की खुशी में नाच गान होने दीजिये। हम लोग नर्तकियों का नृत्य देख कर और मदिरा पी पी कर मस्त हो जायें और अपनी थकावट दूर कर दें।"

आज इन आततायियों ने गागरोन राज्य की सीमा पर स्थित कंचनपुर नामक एक छोटे से नगर को खूब लूटा था। विक्रम की आज्ञा थी कि स्त्रियों और बच्चों के हाथ न लगाया जाये। केवल धन का अपहरण हो। राज्य की ओर से उस सीमावर्ती नगर में डेढ़ सौ सैनिक नियुक्त थे। उन में से अधिकांश सैनिक विक्रम के साथियों द्वारा मारे गये। उन का अध्यक्ष गजराजसिंह चतुर व्यक्ति था। उस ने सोचा कि यदि वे वहीं लड़ते रहे तो सब मारे जायेंगे। अतः वह शेष सैनिकों को ले कर जंगल की ओर निकल गया। उसे सूचना मिल चुकी थी कि अश्वारोहिणी का नायक गुलाबसिंह विक्रम के पीछे चल पड़ा है और उस का तेज़ी से पीछा करता हुआ आ रहा है। उस ने दो सैनिकों को इसलिये भेजा कि वे गुप्त रूप से विक्रम के डेरे का पता लगायें। उसे विश्वास था कि इतनी लूटमार और थकावट के बाद विक्रम उस माल असबाब को लेकर अधिक दूर

नहीं जा सकता और रात को कंचनपुर के पास ही कहीं विश्राम करेगा।

गजराजसिंह ने लगभग पच्चीस सैनिकों को एकत्र कर कहा—"तुम यहाँ से चार चार पाँच पाँच कोस तक आस पास के गाँवों में चले जाओ। इतनी दूर पर बहुत संभव है गुलाबसिंह जी आ गए हों या आने वाले हों। जिस किसी को भी वे मिलें उन से सब हाल कहना और हमारा पता बताना ताकि वे जल्दी से जल्दी कंचनपुर की ओर प्रस्थान कर सकें।"

सैनिक चल पड़े। दो सैनिक नगर की ओर भेजे गए थे ताकि वे वहाँ की स्थिति देखते रहें और यदि गुलाब वहाँ आ जाए तो उसे फौरन सूचित कर सकें।

इधर अभयसिंह ने अपने कुछ साथियों से कहा कि कंचनपुर जा कर आठ दस नर्तकियों को पकड़ लाओ। जब वे नगर से गणिकाओं को ले कर आ रहे थे तो गजराजसिंह के भेजे गए नगरोन्मुख सैनिकों ने उन्हें दूर से देखा और वे दोनों पेड़ों की आड़ ले कर खड़े हो गए। थोड़ी ही देर में घोड़ों की टापों का शब्द समीप आ गया और उन्होंने देखा कि कुछ घुड़सवार एक रथ के साथ तेजी से उत्तर की ओर जा रहे थे।

उन के गुजरने के बाद एक सैनिक बोला—"यह विक्रमसिंह तो महापापी मालूम पड़ता है। इस रथ में अवश्य ही भले घर की बहू बेटियों को ले जाया जा रहा है। तूने देखा, रथ के पर्दा बँधा हुआ था ताकि साधारण व्यक्ति समझ न सकें।"

दूसरा सैनिक क्रोध से दाँत पीसता हुआ बोला—"दीवान का लड़का है भाई। अपने आप को जाने क्या समझता है। सारे कंचनपुर का नाश कर दिया और अब औरतों की बेइज्जती

के लिये तैयार हुआ है।"

पहले ने कहा—"इस दुष्ट का अंत समीप आ गया दीखता है। तभी इस की बुद्धि भ्रष्ट हो गई है। अच्छा, अब जल्दी से नगर की ओर चलें।"

☆

ग्यारहवाँ परिच्छेद

राजकुमारी से विदा लेने के बाद प्रातः काल गुलाबसिंह दो सौ विश्वस्त अश्वारोहियों के साथ चल पड़ा। भेदियों द्वारा विक्रम का पता लगाता हुआ एक स्थान से दूसरे स्थान पर भटकता रहा। आज उसे ज्ञात हुआ था कि विक्रमसिंह कंचनपुर की ओर गया है। बस उस ने उसी ओर चलने का निश्चय किया।

समय समय पर विश्राम लेते हुए अश्व दिन भर दौड़ते रहे। दौड़ते-दौड़ते कंचनपुर से लगभग दो कोस दूर उन्हें रात हो गई।

"आज यहीं विश्राम करें तो अच्छा है गुलाब" मदन ने कहा।

"नहीं मदन, जब विक्रम कंचनपुर की ओर गया है तो उस ने अवश्य लूटमार की होगी। वह धनिकों का नगर है।"

"किन्तु वहाँ पहुँचते पहुँचते आधी रात हो जायेगी। कम से कम भोजन तो यहीं कर लेना चाहिये" मदन ने सुझाव दिया।

"हाँ, यह हो सकता है" गुलाब ने स्वीकृति दी।

घोड़े बांध दिये गये। उन के घास पानी का प्रबन्ध हुआ। इधर सैनिकों के आटे दाल का प्रबन्ध हुआ। भोजन तैयार

करने में गाँव के बहुत से लोगों ने खुशी से सहायता की। भोजन के बाद सैनिक कुछ देर सुस्ताने लगे। इतने ही में गजराजसिंह का एक सिपाही वहाँ आ पहुँचा। उस ने सब हाल गुलाब को कह सुनाया।

गुलाबसिंह ने पूछा—"विक्रम तो चला गया, किन्तु क्या उस के ठहरने के स्थान का पता है ?"

सिपाही ने कहा—"जी हाँ नायक जी ! हमारे अध्यक्ष ने सब प्रबन्ध किया है। बहुत सम्भव है कंचनपुर जाते ही हमें सब सूचना मिल जाये। विक्रम इतने सामान को ले कर अधिक दूर नहीं जा सकता।"

नायक ने कहा—"अच्छा, हम अभी चलते हैं। तुम यहाँ से एक अच्छा घोड़ा ले जाओ और गजराजसिंह जी से अभी जा कर कहो कि हम सब कंचनपुर आ रहे हैं। वे अपने साथियों को ले कर हम से वहीं आकर मिलें।"

सैनिक घोड़ा ले कर फौरन दौड़ गया। इस बीच में विक्रम की खोज में भेजे गये दो सैनिकों में से एक ने आ कर गजराज-सिंह को सूचना दी कि विक्रम ने नगर से एक कोस उत्तर की ओर अपना पड़ाव डाल रखा है। साढ़े ग्यारह बजते बजते गुलाबसिंह अपने साथियों समेत कंचनपुर आ पहुँचा। घोड़ों को घास डाल दी गई और सैनिकों ने अपने हाथों से उन की देह की मालिश की ताकि वे अपने गुरुतर कार्य का भार उठा सकें। गजराजसिंह का अभी वहाँ पता न था किन्तु गुलाब के आने का समाचार बिजली की तरह नगर में फैल गया और प्रसन्नता की एक लहर सी दौड़ गई। गजराज के दो सैनिक जो नगर में घूम रहे थे वहाँ आ गये और गुलाब के पास पहुँचे। एक सैनिक ने कहा—"नायक जी ! विक्रमसिंह तो पास ही

कहीं होगा। आज तो वह खुशियाँ मना रहा है। उसे स्वप्न भी नहीं आ सकता कि आप यहाँ पधार आये हैं।"

नायक ने पूछा—"किन्तु हमें जब तक यह पता न लगे कि वह किस ओर गया है, हम इस अँधेरे में कहाँ भटकते फिरेंगे ?"

दूसरे सैनिक ने कहा— "मैं स्वयं देखा है नायक जी। दस ग्यारह घुड़सवार स्त्रियों से भरे हुए एक रथ में तेज़ी से उत्तर की ओर जा रहे थे।"

मदनसिंह की आँखों में खून उतर आया। बोला—"देखते हो गुलाव ! उस अधम का दुराचार पशुता की सीमा तक पहुँच रहा है।" दोनों सैनिकों की ओर मुँह फेर कर उस ने कहा— "विश्वास रखो भाई। अगर वह मेरे वार में आ गया तो मैं उस के टुकड़े टुकड़े कर डालूँगा। राजा मुझे चाहे फाँसी पर चढ़ा दे, मैं ऐसे पामरों का जीना कभी नहीं सह सकता।"

"ऐसा न कहो मदन" नायक ने समझा कर कहा--"महाराज की आज्ञा मानना हमारा धर्म है। ईश्वर ने चाहा तो मैं उसे बन्दी बनाकर ही छोड़ूँगा। विक्रम यद्यपि विद्रोही है तथापि वह मनुष्यता से इतना कभी नहीं गिर सकता कि स्त्रियों का अपमान करे।"

"अरे भाई, अभी तो इस ने कहा है कि एक रथ जा रहा था।"

"हो सकता है कि उस में नर्तकियाँ हों" गुलाब ने कहा "हाँ इतनां अवश्य है कि विक्रमसिंह का साथी अभयसिंह बड़ा नीच व्यक्ति है। कहीं उस ने यह पाप किया तो वह अपने प्राणों से हाथ धो बैठेगा।"

ये बातें हो ही रही थीं कि गज़राजसिंह वहाँ आ पहुँचा। उस

के साथ मुश्किल से बीस इक्कीस आदमी थे। सब पैदल थे। केवल गजराजसिंह एक घोड़े पर सवार था जिसे उस का सैनिक गुलाब के जत्थे में से लाया था।

अभिवादन का उत्तर देते हुए नायक ने कहा—"आपने बड़ी फुर्ती की गजराजसिंह जी। हम तो समझे थे कि आप सवेरे तक आ सकेंगे। कुछ देर आराम करिये।"

"यह समय आराम का नहीं है नायक जी! हमें अभी अभी धावा बोलना है वर्ना पंछी पिंजरे से उड़ जायेगा।"

गुलाब ने पूछा—"क्या आप को विक्रम की सूचना मिली है?"

"हाँ हाँ, वह तो एक कोस उत्तर की ओर सघन वृक्षों के बीच में अपना डेरा डाले हुए है। मेरा एक सैनिक यह समाचार लाया है और एक वहीं छिपा बैठा है। वे तो लूट की खुशी में शराब पी रहे हैं" गजराज ने कहा।

"बस यही स्वर्ण अवसर है" मदन प्रसन्नता से उछल पड़ा "कई दिनों बाद आज मौक़ा लगा है।"

नायक ने प्रयाण का आदेश दिया। तूर्य बजा। सैनिक फिर तैयार हुए। घोड़े कसे गये और टोली चल पड़ी। रात का एक बज गया था। चारों ओर शान्ति थी। गजराज के लोगों को सैनिकों ने अपने साथ बैठा लिया था। अश्वों को भली भाँति सँभालते हुए सैनिक आगे बढ़ रहे थे। दिन भर की दौड़ से घोड़े थक गये थे किन्तु वे मरते दम तक मुँह मोड़ने वाले न थे। कुछ देर बाद स्वामिभक्त अश्वों ने अपने आरोहियों को इच्छित स्थान पर पहुँचा दिया। गुलाब ने दूर से देखा कि वृक्षों के झुंड में कई मशालें जल रही थीं। उस ने फौरन सब को ठहरने का आदेश दिया। घोड़े रुक गये।

नायक बोला—"गजराजसिंह। मामला तैयार है। हमें इस प्रकार हमला करना है कि कोई बच कर निकल न सके।"

"बस तो फिर देर क्या है नायक जी, घोड़े बढ़ाइये!"

"नहीं, नहीं" गुलाबसिंह बोला—"कुछ देर रुक जाओ। अश्व थक गये हैं। कुछ विश्राम के बाद हम लोग बाज़ की तरह उन पर झपटेंगे ताकि वे सँभल न सकें।"

उधर विक्रम के डेरे में दूसरा ही रंग जमा हुआ था। विजय के गर्व में फूले हुए सैनिकों ने खूब भोजन किया था। वे सब लालायित दृष्टि से वेश्याओं का नृत्य देख रहे थे और प्यालियों पर प्यालियाँ उँडेल रहे थे। विक्रमसिंह अशर्फियों की एक थैली लिये बैठा था। मदोन्मत्त होकर वह अशर्फियाँ फेंक रहा था। वारुणी के घूँट पी कर वह मद भरे नेत्रों से उन की ओर देखता था। अभयसिंह विक्रम का दिया हुआ मोतियों का हार गले में पहने हुए था और वह भी शराब में मस्त हो कर बैठा था।

देखते ही देखते टापों के स्वर से आकाश गूँज उठा। गुलाबसिंह नंगी तलवार लिये झपटता हुआ आ रहा था। नर्तकियाँ नाचती नाचती रुक गईं। प्यालियाँ हाथों से छूट पड़ीं और घबराहट में सब बोतलें फूट गईं। विक्रम और अभय का नशा हवा हो रहा था। सैनिक अपने अपने शस्त्र सँभाल रहे थे। किन्तु विक्रम बड़ा साहसी युवक था। उस अवस्था में भी उस की सैन्य संचालन शक्ति नष्ट नहीं हुई थी। वह तलवार खींच कर खड़ा हो गया। नर्तकियाँ भाग कर डेरे में छिप गईं। विक्रमसिंह क्रोध से पागल हो रहा था। उस ने अपने साथियों को ज़ोर से ललकार कहा—"मेरे बहादुर दोस्तो! तैयार हो जाओ। दुश्मनों को मार कर ढेर लगा दो। तुम्हारी संख्या बहुत ज्यादा है। जिस तरह तुम ने कंचनपुर में बहादुरी दिखाई,

उसी तरह यहाँ भी दुश्मनों को काट कर फेंक दो।"

फिर उस ने अपने मित्र से कहा—"अभयसिंह! दौड़ कर मेरा घोड़ा ले आ।"

देखते ही देखते डेरा घिर गया। ज़ीन बांधने का अवकाश न देखकर विक्रम ने तलवार मुँह में दबाई और उछल कर घोड़े पर जा बैठा। अभयसिंह भी इसी प्रकार चढ़ गया। इतनें ही में गुलाबसिंह का आदेश सुनाई पड़ा—"बहादुर सिपाहियो। इस इस डेरे को अच्छी तरह से घेर लो। कोई बच कर भागने न पाये। तेज़ी से हमला करो।"

मार काट शुरू हुई। दोनों दल एक दूसरे से भिड़ गये। गजराजसिंह के जो साथी अश्वारोहियों के साथ बैठे थे, नीचे कूद पड़े और तलवारें खींच कर शत्रुओं की ओर दौड़े। घोड़ा आगे बढ़ा कर गजराज सिंह बोला "बहादुरो! कंचनपुर का बदला अभी अभी लेना है। इन कायरों को मारते मारते मैदान साफ कर दो।"

उस की आवाज सुनते ही विक्रम उस पर टूट पड़ा और बोला —"गीदड़ के बच्चे। कंचनपुर में पिटने से तेरी अक्ल ठिकाने नहीं लगी। तेरी बोटी बोटी काट डालूँगा। ले सँभाल।"

गजराज भी तेज़ी से विक्रम की ओर लपका। दोनों एक दूसरे से जूझने लगे। विक्रम के साथ उस के सैनिकों ने गजराज को घेर लिया। वह भूखे सिंह की तरह हमला करने लगा। बात की बात में गजराज ने पाँच सात सैनिकों का सिर उड़ा दिया किंतु विक्रम के असि-संचालन की दक्षता के आगे उसके वार खाली जाने लगे। आठ दस वार बचा कर विक्रम ने अपनी तलवार गजराज की गर्दन में ठूँस दी। तलवार के पार निकलने पर भी उस ने वार किया जिसे विक्रम ने अपनी ढाल पर झेला, किन्तु

नायक बोला—"गजराजसिंह। मामला तैयार है। हमें इस प्रकार हमला करना है कि कोई बच कर निकल न सके।"

"बस तो फिर देर क्या है नायक जी, घोड़े बढ़ाइये!"

"नहीं, नहीं" गुलाबसिंह बोला—"कुछ देर रुक जाओ। अश्व थक गये हैं। कुछ विश्राम के बाद हम लोग बाज़ की तरह उन पर झपटेंगे ताकि वे सँभल न सकें।"

उधर विक्रम के डेरे में दूसरा ही रंग जमा हुआ था। विजय के गर्व में फूले हुए सैनिकों ने खूब भोजन किया था। वे सब लालायित दृष्टि से वेश्याओं का नृत्य देख रहे थे और प्यालियों पर प्यालियाँ उँडेल रहे थे। विक्रमसिंह अशर्फियों की एक थैली लिये बैठा था। मदोन्मत्त होकर वह अशर्फियाँ फेंक रहा था। वारुणी के घूँट पी कर वह मद भरे नेत्रों से उन की ओर देखता था। अभयसिंह विक्रम का दिया हुआ मोतियों का हार गले में पहने हुए था और वह भी शराब में मस्त हो कर बैठा था।

देखते ही देखते टापों के स्वर से आकाश गूँज उठा। गुलाबसिंह नंगी तलवार लिये झपटता हुआ आ रहा था। नर्तकियाँ नाचती नाचती रुक गईं। प्यालियाँ हाथों से छूट पड़ीं और घबराहट में सब बोतलें फूट गईं। विक्रम और अभय का नशा हवा हो रहा था। सैनिक अपने अपने शस्त्र सँभाल रहे थे। किन्तु विक्रम बड़ा साहसी युवक था। उस अवस्था में भी उस की सैन्य संचालन शक्ति नष्ट नहीं हुई थी। वह तलवार खींच कर खड़ा हो गया। नर्तकियाँ भाग कर डेरे में छिप गईं। विक्रमसिंह क्रोध से पागल हो रहा था। उस ने अपने साथियों को ज़ोर से ललकार कहा—"मेरे बहादुर दोस्तो! तैयार हो जाओ। दुश्मनों को मार कर ढेर लगा दो। तुम्हारी संख्या बहुत ज्यादा है। जिस तरह तुम ने कंचनपुर में बहादुरी दिखाई,

उसी तरह यहाँ भी दुश्मनों को काट कर फेंक दो।"

फिर उस ने अपने मित्र से कहा—"अभयसिंह ! दौड़ कर मेरा घोड़ा ले आ।"

देखते ही देखते डेरा घिर गया। ज़ीन बांधने का अवकाश न देखकर विक्रम ने तलवार मुँह में दबाई और उछल कर घोड़े पर जा बैठा। अभयसिंह भी इसी प्रकार चढ़ गया। इतनें ही में गुलाबसिंह का आदेश सुनाई पड़ा—"बहादुर सिपाहियो। इस इस डेरे को अच्छी तरह से घेर लो। कोई बच कर भागने न पाये। तेज़ी से हमला करो।"

मार काट शुरू हुई। दोनों दल एक दूसरे से भिड़ गये। गजराजसिंह के जो साथी अश्वारोहियों के साथ बैठे थे, नीचे कूद पड़े और तलवारें खींच कर शत्रुओं की ओर दौड़े। घोड़ा आगे बढ़ा कर गजराज सिंह बोला "बहादुरो ! कंचनपुर का बदला अभी अभी लेना है। इन कायरों को मारते मारते मैदान साफ कर दो।"

उस की आवाज सुनते ही विक्रम उस पर टूट पड़ा और बोला —"गीदड़ के बच्चे। कंचनपुर में पिटने से तेरी अक्ल ठिकाने नहीं लगी। तेरी बोटी बोटी काट डालूँगा। ले सँभाल।"

गजराज भी तेज़ी से विक्रम की ओर लपका। दोनों एक दूसरे से जूझने लगे। विक्रम के साथ उस के सैनिकों ने गजराज को घेर लिया। वह भूखे सिंह की तरह हमला करने लगा। बात की बात में गजराज ने पाँच सात सैनिकों का सिर उड़ा दिया किंतु विक्रम के असि-संचालन की दक्षता के आगे उसके वार खाली जाने लगे। आठ दस वार बचा कर विक्रम ने अपनी तलवार गजराज की गर्दन में ठूँस दी। तलवार के पार निकलने पर भी उस ने वार किया जिसे विक्रम ने अपनी ढाल पर झेला, किन्तु

तलवार फिसलती हुई उस की छाती में लगी और उसे जख्मी कर दिया।

गजराज को नीचे गिरते देख कर गुलाबसिंह के क्रोध की सीमा न रही। उस का खून खौल उठा। क्रोध से शरीर काँपने लगा। और वह बोला—"अरे निर्दयी। चारों ओर से घिरे हुए, उस ग़रीब को मारने में तुझे लज्जा नहीं आई।"

विक्रम ने कहा—"अच्छा गुलावसिंह, ले अब तू तैयार हो जा। उस दिन के बाद तू आज नज़र आया है। वह दिन याद है जब तू इतना अकड़ रहा था। आज हमारा फैसला होगा। ले मेरा लोहा परख ले। तेरे सिर पर तेरी मौत नाच रही है।"

"क्यों बातें बनाता है विक्रम" गुलाब ने ललकारा—"तुझ से जो कुछ बन सके, कर दिखा। तेरी सारी शेखी अभी मिट्टी में मिलाता हूँ।"

दोनों एक दूसरे से भिड़ गए। वार पर वार होने लगे। विक्रम आज असाधारण पराक्रम दिखा रहा था किन्तु गुलाब ने बिद्युत् गति से से घात पर घात कर के उस की नाक में दम कर दिया। विक्रम की साँस उखड़ने लगी और उस के हाथ में कुछ शिथिलता आने लगी। इतने ही में अभय सिंह उस की सहायता के लिए आ गया। गुलाब पर दो ओर से आक्रमण होने लगा। अभयसिंह को देख कर उसे ऐसा क्रोध आया मानों काले साँप पर किसी ने पीछे से पैर रख दिया हो। वह फुर्ती से दोनों पर वार करने लगा। उसे यह भी सुध नहीं रही कि महाराज ने विक्रम को बन्दी बनाने का आदेश दिया था। इतने ही में पैदलों को काटता हुआ मदनसिंह उस ओर झपटा और अभय से बोला—"सूअर के बच्चे। अकेले आदमी पर

वार करने में तुझे शरम नहीं आती।" यह कह कर वह उस से गुथ गया।

मदन को पास देख कर गुलाब का साहस चौगुना हो गया। तलवार की झंकार बढ़ गई। देखते ही देखते ही गुलाबसिंह ने विक्रम के बाँयें कन्धे पर इतनी ज़ोर से तलवार मारी कि वह उस का वक्षस्थल और पेट चीरती हुई दाहिने हाथ के नीचे से साफ़ निकल गई। विक्रम धराशायी हो गया। उस की सेना में हाहाकार मच गया। अभयसिंह के हाथ पाँव ढीले हो गए। उस ने सोचा कि वहाँ अधिक देर ठहरना तो मौत को चुनौती को देना है। अतः अपना घोड़ा मोड़ कर वह युद्ध से ऐसा भागा कि पीछे देखने का नाम नहीं लिया। यह देख कर कुछ और लोग भी भाग खड़े हुए और शेष सैनिकों ने हथियार डाल दिये। युद्ध बन्द हो गया। गुलाबसिंह के लगभग डेढ़सौ वीर काम आए। गजराज और उस के सब साथी खेत रहे। विक्रम की सेना के केवल सत्तर अस्सी आदमी वहाँ थे जो बन्दी बना लिए गए।

कुछ समय बाद जब गुलाबसिंह का खून ठण्डा हुआ तो उसे विक्रम की मृत्यु पर शोक होने लगा। वह मदन से बोला—"यह मैंने क्या कर डाला मदनसिंह! महाराज की आज्ञा थी कि विक्रम को जीवित पकड़ा जाये। प्रधान मंत्री का इकलौता बेटा, उन के वंश का अंतिम उजाला आज नष्ट हो गया। बड़ा अनर्थ हो गया मदन।"

"यह तो होना ही था गुलाब। प्राण रहते विक्रमसिंह हाथ आने वाला नहीं था।"

गुलाब ने लम्बी साँस लेकर कहा—"अब मेरे प्राणों की बारी है। प्रधान मंत्री से वैर ठानने और महाराज की आज्ञा का

उल्लंघन करने का और क्या परिणाम हो सकता है।"

"मेरे रहते एक तो क्या दस राजा भी तुम्हें नहीं मार सकते" मदन ने आश्वासन दिया "अपने साथी और ये बन्दी इस बात की साक्षी देंगे कि युद्ध कितना भयंकर था। हम ने केवल अपनी रक्षा की है। इस पर भी यदि तुम्हें प्राणदण्ड की आशंका हो तो फिर चलो, घोड़ों की लगाम किसी दूसरी ओर मोड़ी जाए।"

"यह नहीं हो सकता मदन ! मुझे मृत्यु का भय नहीं। महाराज को सब हाल स्पष्ट रूप से बता दूँगा। विक्रम ने अपनी मौत को स्वयं बुलाया है। उस ने अपने किए का फल पाया। हमें गागरोन चलना चाहिए।"

"अच्छा यही सही" मदन ने कहा "जो कुछ होगा, निबट लेंगे। साक्ष्य के लिए उन नर्तकियों को भी ले चलो जो यहाँ उपस्थित थीं। कुछ तो बेचारी घोड़ों के पैरों में आने से मर गईं। चार बची हैं।"

इस के बाद नायक ने आदेश दिया—"लूट का जितना माल है वह मेरे आगे एकत्र करो। बन्दियों की तलाशी ले लो। यह धन राजकोष में जमा होगा और राज्य की ओर से कंचनपुर वासियों को लौटाया जायेगा।"

मदन ने कहा—"अभयसिंह के भाग जाने का जितना मुझे दु:ख है उतना किसी को न होगा। उस गीदड़ के गले में मोतियों का एक बहुमूल्य हार पड़ा हुआ था।"

प्रातःकाल नायक ने सैनिकों सहित गागरोन की ओर कूच बोल दी।

★

बारहवां परिच्छेद

विक्रम के अवसान का समाचार दावानल की भाँति चारों ओर फैल गया। प्रधान मंत्री पुत्र शोक में अचेत हो गये। सारे नगर में सन्नाटा छा गया। विक्रम के साहस और वीरता से सब परिचित थे। इसीलिए उस के दुराग्रही और उग्र होने पर भी वे उस से स्नेह करते थे क्योंकि वे जानते थे कि यदि कोई युद्ध हुआ तो विक्रम राज्य की रक्षा के लिए अपने प्राण दे देगा। अब उन्हें यह चिन्ता हुई कि विक्रम तो विक्रम, कहीं गुलाबसिंह महाराज के क्रोध का शिकार न बन जाये।

सुध आने पर बैरीसाल में पुत्र-हत्या का बदला लेने की भावना बढ़ने लगी। उन्होंने मन में कहा—"मुझे पहले ही इस की आशंका थी। आखिर गुलाबसिंह ने अपनी शत्रुता का बदला विक्रम से ले ही लिया।" वे मूछों पर ताव दे कर बड़बड़ाने लगे—"यदि मैं भी पुत्र की मौत का बदला उस से न लूं तो मेरा नाम बैरीसाल नहीं। राजकन्या से विवाह करना तो दूर, गुलाबसिंह अपने प्राणों को भी नहीं बचा सकता।"

संध्या समय प्रधान मंत्री को सूचना मिली कि मातमपुर्सी के लिये महाराज नरेन्द्रसिंह स्वयं पधारे हैं। परम्परा के अनुसार बैरीसाल सफेद चद्दर ओढ़ कर बैठ गये और बिना किसी अभिवादन के चुपचाप बैठे रहे। राजाधिराज को देख कर

वृद्ध मंत्री फूट-फूट कर रोने लगे। महाराज का भी कंठ भर आया। रोते-रोते बैरीसाल कहने लगे—"महाराज, गुलाबसिंह ने मेरा इकलौता लड़का मुझ से छीन लिया। उस की विक्रम से शत्रुता थी। वह राजकन्या से ब्याह करना चाहता है इसीलिये उस ने यह नीचता दिखाई है।"

राजाधिराज को गुलाबसिंह पर क्रोध आ गया। पता नहीं यह क्रोध नकली था या असली। नरेन्द्र सहानुभूति प्रकट करते हुए बोले—"विश्वास रखिये मंत्री जी! कमलिनी का विवाह ऐसे व्यक्ति से नहीं हो सकता। हम आप से प्रतिज्ञा करते हैं कि हम अपनी कन्या उसे कभी नहीं देंगे चाहे हमें अपने प्राण देनें पड़ें।"

बैरीसाल ने संतोष की साँस ली। चलो एक बात तो पक्की हुई। अब उन्होंने गुलाब की मौत का सुझाव दिया। कुछ क्षण चुप रह कर वे धीरे से बोले—"पृथ्वीनाथ! राजाज्ञा का उल्लंघन कर गुलाबसिंह ने केवल आप का ही अपमान नहीं किया है बल्कि सारे राज्य और शासन विधि का अपमान किया है। यदि उसे प्राणदण्ड न मिला तो यह एक बुरा उदाहरण बनेगा और अनुशासन बिगड़ जायेगा। राजाज्ञा का कोई आदर नहीं करेगा।"

"ठीक है मंत्री जी" राजाधिराज ने कहा "कल दोपहर तक गुलाबसिंह यहाँ आ जायेगा। सायंकाल को हम राज दरबार बुलायेंगे। गुलाब को वहाँ बुलवा कर सब हाल उस से पूछा जायेगा। दंड का निर्णय हम तभी कर सकेंगे।"

"जो आज्ञा महाराज।"

कुछ देर बैठ कर नरेन्द्र राजमहल चले गये।

दूसरे दिन गुलाब के आते ही उसे सूचित किया गया कि

कि संध्या को राज दरबार लग रहा है जिस में उस से विक्रम के बारे में सब पूछताछ की जायेगी। अतः वह ठीक समय पर उपस्थित हो जाये।

राज दरवार की खबर सारे शहर में फैल गई। अतः हजारों लोग एकत्र हो गये। नायक ने भी अपने लोगों को साथ लिया और एक जलूस बना कर वे चलने लगे। सब से आगे दस घुड़ सवार थे जिन के पीछे विक्रम के बन्दी सैनिक चल रहे थे जिन के हथकड़ियाँ पड़ी हुई थीं। वन्दियों के पीछे चार घुड़सवार थे और वाद में तीन गाड़ियाँ थीं जिन में कंचनपुर की लूट का माल सावधानी से भरा हुआ था। इन सव के पीछे गुलाव, मदन और शेष अश्वारोही थे।

सैकड़ों व्यक्ति इस जलूस के पीछे राज सभा देखने जा रहे थे। सभा में सन्नाटा छाया हुआ था। सारे सभासद मुँह लटकाये वैठे थे—न किसी वाद्य का स्वर था और न किसी नर्तकी का नृत्य। प्रधान मंत्री की आकृति गम्भीर और शोक पूर्ण थी और उन की दृष्टि ज़मीन से ऊपर नहीं उठती थी। वहाँ पहुँचते ही गुलावसिंह घोड़े से उतरा और चुपचाप अपने स्थान पर जा कर वैठ गया।

कुछ देर में राजाधिराज पधारे। सभासदों ने उठ कर प्रणाम किया। महाराज सिंहासन पर बैठे। सभा में फिर शान्ति छा गई। सब नागरिक उत्सुकता से देख रहे थे। कुछ देर वाद महाराज स्वयं वोले— "हमें वड़ा खेद है गुलाबसिंह कि तुम ने हमारी आज्ञा का उल्लंघन किया।"

"मुझे वहुत दुःख है महाराज !" गुलाव ने सिर झुका कर कहा – "मैं विवश था। संघर्ष ने इतना भीषण रूप धारण कर लिया कि विक्रमसिंह जी ने हथियार डालने या बच

निकलने की नहीं सोची। लूट मार के वाद विद्रोहियों ने शराब पी ली थी।"

"किन्तु तुम लोग तो होश में थे" नरेन्द्र ने दृढ़ता से कहा।

"पृथ्वीनाथ! युद्ध की भीषणता के कारण दोनों पक्ष वालों को मरने मारने के अतिरिक्त और कुछ नहीं सूझता था। यदि महाराज को मेरी बात पर विश्वस न हो तो विक्रमसिंह जी के सैनिकों और मेरे साथियों से साक्षी ली जाए।"

"हम अपनी अश्वारोहणी के नायक पर अविश्वास नहीं करते गुलाबसिंह" राजधिराज बोले—"हमें पूरा विश्वास है कि जिस व्यवित को हम ने राज्य की रक्षा के लिए नायक वनाया है वह प्राणदण्ड के भय से कभी झूठ नहीं बोल सकता।"

"बिल्कुल सत्य है अन्नदाता जी" महाराज की बात का समर्थन करते हुए राजपुरोहित सभा में खड़े होकर बोले—"गुलाबसिंह जी निर्दोष हैं इसीलिए ये इतनी निर्भीकता के साथ सभा में प्रस्तुत हुए हैं। यदि ये अपराधी होते तो यहाँ आने का साहस नहीं कर सकते थे। इन्होंने जो कुछ किया है वह परिस्थिति वश किया है। महाराज! जीत सदा सत्य की होती है।" वृद्ध पुरोहित के चेहरे से सत्य और न्याय के प्रति अगाध प्रेम झलक रहा था।

पुरोहित का मन्तव्य सुन कर प्रधान मंत्री जल भुन कर राख हो गए। उन्होंने चुपके से प्रधान सेनापति हिम्मतसिंह की ओर संकेत किया। वे भी अपना मत प्रकट करने तैयार होकर आए थे। प्रधान सेनापति बड़े बलिष्ट और लम्बे कद के व्यक्ति थे। उन की बड़ी बड़ी मूँछें सदैव ऊपर तनी रहती थीं और दो तलवारें कमर से लटकी रहती थीं। संकेत पाते ही वे खड़े

होकर नृपति से बोले—"यदि महाराज की आज्ञा हो तो मैं गुलाबसिंह जी से एक प्रश्न करूँ ?"

"हाँ, हाँ ।"

तब गुलाबसिंह की ओर उन्मुख होकर वे बोले—"गुलाबसिंह जी ! आप ने युद्ध करते समय क्या विक्रमसिंह जी को यह चेतावनी दी थी कि यदि तुम हथियार डाल दो तो तुम्हारी जान बच सकती है ?"

"नहीं सेनापति जी, मैंने ऐसी कोई चेतावनी नहीं दी ।"

"क्यों नहीं दी ? इस से यह स्पष्ट होता है कि आप की उन से शत्रुता थी । जब महाराज ने यह आज्ञा दी थी कि उन्हें जीवित पकड़ा जाये तो आप का कर्त्तव्य था कि आप उन्हें हथियार डालने को कहते । उन्हें तो यह पता भी नहीं था कि पृथ्वीनाथ ने उन के प्राणों की रक्षा का आदेश दिया है । इसीलिये उन्होंने मर मिटने का निश्चय किया । यदि उन्हें यह ज्ञात हो जाता तो वे अवश्य ही आत्म-समर्पण कर देते ।"

"सेनापति जी, वहाँ चेतावनी देने का अवकाश नहीं था । वे लोग हमारी सुननेवाले न थे । उन्हें अपनी शक्ति पर बहुत गर्व था ।"

प्रधान सेनापति ने बिना कुछ कहे नरेन्द्र की ओर मुँह किया और बोले—"महाराज ! मैंने स्थिति स्पष्ट कर दी है । आप जो भी निर्णय दें, वह सर्वमान्य है । विक्रमसिंह जी की हत्या से पहले गुलाबसिंह जी ने उन्हें यह भी नहीं बताया कि आप ने उन्हें जीवित ही बन्दी बनाने की आज्ञा दी है । यदि इन्होंने ऐसा कहा होता तो प्रधान मंत्री के इकलौते पुत्र के प्राण अवश्य बच जाते ।"

बैरीसाल को हिम्मतसिंह के शब्दों से कुछ संतोष हुआ और

उन्होंने कृतज्ञतासूचक दृष्टि से सेनापति की ओर देखा। इतने ही में कोष मंत्री लक्ष्मी चन्द जी अपने स्थान से उठे और बोले—"अन्नदाता जी, आप की आज्ञा से एक बात मैं भी पूछना चाहता हूँ।"

"हाँ हाँ, आप पूछ सकते हैं।"

तब उन्होंने नायक से कहा—"गुलाबसिंह जी। हम ने सुना है कि वहाँ पर कुछ नर्तकियाँ भी पकड़ी गई हैं। आप तो कहते हैं कि युद्ध इतना भयंकर था कि मरने मारने के अतिरिक्त कुछ सूझता ही न था। यदि ऐसी बात थी तो वे वहाँ कैसे बच गईं और यदि उन को प्राणों की रक्षा हो सकती थी तो फिर विक्रमसिंह जी के प्राण बचाना क्या बड़ी बात थी?"

गुलाबसिंह के चेहरे पर हल्की सी मुस्कराहट आ गई और वह बोला—"क्षमा कीजिए मंत्री जी! आप को युद्ध का अनुभव नहीं है। आप उस पराक्रमी योद्धा की स्त्रियों से तुलना कर रहे हैं। नर्तकियों में और विक्रमसिंह जी में ज़मीन और आसमान का अन्तर था। नर्तकियों से हमें क्या भय हो सकता था? उन के हाथ से कोई शस्त्र भी नहीं था। वह कोई घरेलू झगड़ा नहीं था। वहाँ तलवारें बज रही थीं और खून बह रहा था। फिर भी घोड़ों के दौड़ने से कई नर्तकियाँ कुचल गई हैं।"

कोष मंत्री चुपचाप खिसिया कर बैठ गए। किन्तु राजाधिराज गम्भीर हो कर बोले--"यह तो सब ठीक है गुलाबसिंह, किन्तु राजाज्ञा न मानने का अपराध तो तुम ने किया ही है। जब हम ने यह स्पष्ट आज्ञा दी थी कि विक्रम के प्राण न लिये जायें तो तुम्हें उस का पालन करना करना चाहिये था। तुम ने इतना भी न सोचा कि विक्रमसिंह हमारे राजभक्त मंत्री का एक ही पुत्र था, उन के बुढ़ापे का एक ही सहारा था।"

यह सुन कर प्रधान मंत्री के आँसू गिरने लगे। सारे सभा-सदों ने मुँह लटका लिये। गुलाबसिंह की आँखें भी नीची हो गईं और वह सिर झुकाए खड़ा रहा।

कुछ क्षणों बाद राजाधिराज फिर बोले—"हम ने स्पष्ट रूप से तुम्हें मना किया था गुलाबसिंह। हम राजाज्ञा का उल्लंघन नहीं सह सकते। अपराधी को दण्ड देना हम न्यायोचित समझते हैं। यदि हम दण्ड ने दें तो शासन कार्य नहीं चल सकता।"

गुलाबसिंह तनकर खड़ा हो गया। पैनी छुरी की तरह कटाक्ष करते हुए वह बोला—"दण्ड पाने के लिये ही मैं यहाँ आया हूँ महाराज! किसी पुरस्कार लिये नहीं। यदि मुझे आप का दण्ड अस्वीकार होता तो आज यहाँ क्यों प्रस्तुत होता?"

"अच्छा तो गुलाबसिंह! तुम अपने निवास स्थान पर जा सकते हो! हम इस प्रश्न पर विचार करेंगे। प्रातः काल तुम्हें हमारा निर्णय ज्ञात हो जायगा।"

"जो आज्ञा महाराज" गुलाब ने सिर झुकाया और अपने घर चल पड़ा। सभा विसर्जित हुई। नागरिक बड़े असन्तुष्ट हो कर लौट रहे थे। कहते थे "पता नहीं राजा इतनी क्रूरता का बर्ताव क्यों कर रहे हैं। विक्रमसिंह जैसे दुष्ट का तो मरना ही अच्छा था चाहे वह प्रधान मंत्री का लड़का हो या उस के बाप का।"

राजमहल में प्रवेश करने से पहले नरेन्द्र ने प्रधान सेना-पति को आज्ञा दी कि गुलाबसिंह को अपने मकान में नज़रबन्द रखा जाये ताकि वह कहीं न जा सके और न कोई उस से मिल-ने आ सके।

*

तेरहवां परिच्छेद

रात हुई। राजकुमारी को सभा का हाल विदित हुआ। वह बहुत विचलित हुई। राजदण्ड का ध्यान आने पर उस का हृदय काँप उठता था। न जाने उस के प्रमी की क्या दशा होगी। सोचने लगी—"पिता जी को निश्चय ही सब बातों का पता लग गया है वर्ना वे इतने उदार होकर गुलाब के साथ इतनी क्रूरता का वर्ताव क्यों करते।" इन्हीं चिन्ताओं में डूबी हुई वह चुपचाप बैठी रही। गुलाब के वियोग में वह बड़ी देर तक तड़पती रही। उसे बार-बार वे शब्द याद आते थे—"विश्वास रखो कम-लिनी, यदि जीवन शेष रहा तो फिर मिलूँगा।"

किन्तु जीवन? आज तो जीवन और मरण का प्रश्न था। कहीं उस के प्रेमी को उस से सदा के लिए न छीन लिया जाए। सोचते-सोचते युवती अधीर हो उठी। दासी को बुलवाकर बोली—"क्यों चम्पा? क्या उन से मिलने की कोई तरकीब हो सकती है? आज चाहे मुझे प्राण देने पड़ें किन्तु मैं उन से मिलना चाहती हूं। यही मेरी इच्छा है।"

"नहीं, नहीं, राजकुमारी जी, ऐसा लड़कपन न करिये। उन के मकान के चारों ओर कड़ी निगरानी की जा रही है। न कोई बाहर आ सकता है और न कोई भीतर जा सकता है। महाराज की आज्ञा है और प्रधान सेनापति का प्रबन्ध।"

कान्ति ने भी कहा—"हाँ राजकुमारी जी। यदि हम ने वहाँ

जाने का प्रयत्न किया तो वह किसी दशा में नहीं छिप सकता और यदि यह बात नगर में फैल गई तो हम किसी को अपना मुँह नहीं दिखा सकेंगी। राजवंश की कीर्ति में सदा के लिये कलंक लग जाएगा।"

"तो फिर क्या करूँ कान्ति। मुझे कुछ नहीं सूझता। क्या इस दीवार से सिर फोड़ कर मर जाऊँ?"

"ऐसा न कहिए राजकुमारी जी। एक उपाय तो मुझे सूझ रहा है। आप रानी जी के पास जाकर रोने लगिए और कहिए कि यदि वीर नायक को प्राणदण्ड दिया गया तो मैं कटार भोंक कर मर जाऊँगी। जब तक वे आपको विश्वास न दिला दें, वहाँ से हटने का नाम न लीजिये"।

"अच्छा" कह कर वह उस ओर चली। उस के केश इधर उधर बिखरे हुए थे। अलकें मुड़ मुड़ कर सामने गिर रही थीं। उसे अपने वस्त्रों की कोई सुध न थी। उस के बड़े बड़े नेत्र आँसुओं से भीगे हुए थे मानों दो भँवरे अर्द्धविकसित पंकजों में चिपके हुए हों।

अपनी माँ के पास पहुँचते ही कमलिनी उस से लिपट गई और फूट फूट कर रोने लगी। उस के रुदन में कोई बनावट न थी। उस की वेदना आँसुओं में उमड़ी पड़ रही थी और कण्ठ से क्रन्दन के अतिरिक्त और कोई स्वर नहीं निकल पाता था। बेटी के दुःख से माँ का जी भर आया। उसे अपनी छाती से लगा कर बोली—"कमलिनी बेटी! रोए मत। मुझ से बात तो कह। तुझे क्या तकलीफ है?"

राजकुमारी रोती रही। उस का कंठ अवरुद्ध होने से वह कुछ बोल नहीं पाती थी। कमलिनी सदैव प्रसन्न रहने वाली लड़की थी। ऐसी लड़कियाँ प्रायः विलाप नहीं करतीं किन्तु

जब कभी उन के आंसू उमड़ पड़ते हैं तब वे बहुत देर तक नहीं रुकते। रानी ने आज कई वर्षों बाद अनुभव किया कि अब उस की बेटी के रुदन में बच्चों की सी तीक्ष्णता और अज्ञान न था। वह एक विरहणी का कोमल और हृदयस्पर्शी स्वर था। उस के हृदय में अपने प्रेमी के प्रति अगाध सहानुभूति और तन्मयता थी। अपनी लड़की के आंसू आँचल से पोंछती हुई कुसुम बोली—"बेटी, बात तो कह। रोने से काम नहीं चलता।"

"माँ! मैं तुम से गुलाब के प्राणों की भीख माँगती हूँ" कह कर वह रुकी और फिर बोली-"तुम से क्या छिपाऊँ। अगर उन्हें प्राणदण्ड मिला तो मैं भी विष पी कर मर जाऊँगी।"

"इसमें रोने की क्या बात थी" रानी ने साँत्वना दे कर कहा—"यह कौन सा बड़ा काम है। मैं महाराज के आते ही उन से निवेदन करूँगी। चाहे प्रधान मंत्री कितना ही जोर लगायें, वे गुलाबसिंह का बाल भी बाँका नहीं कर सकते। तू मेरी बात पर भरोसा रख। मैं ऐसा आग्रह करूँगी कि महाराज को मेरी बात माननी ही पड़ेगी। जाओ, आनन्द से भोजन करो और सो जाओ।"

कुछ देर में कमलिनी चली गई। भोजन का समय हुआ। महाराज ने अन्तःपुर में प्रवेश किया। उन के आते ही रानी ने उन्हें आड़े हाथों लिया—

"क्यों महाराज? हम ने सुना है कि आप गुलाबसिंह को फाँसी पर लटका रहे हैं? राज्यद्रोहियों का दमन करने वाले उस स्वामिभक्त वीर को यह पुरस्कार? क्या यही राजोचित है? क्या कहने हैं आप के न्याय के। आप को पता है जनता क्या कह रही है?"

रानी का एक एक शब्द नरेन्द्र पर पैनी छुरी की तरह

वार कर रहा था। राजा ने गम्भीरता से कहा—"दण्ड का हम ने अभी कोई निश्चय नहीं किया रानी। इन बातों को बहुत ठंडे दिल से सोचने की जरूरत है। जल्दबाज़ी से काम बिगड़ जाता है। जानती हो, बैरीसाल ने पुत्र का बदला लेने के लिए कमर कस रखी है। उन का तो वंश ही नष्ट हो गया। अब उन्हें मृत्यु से क्या भय है। वे सफलता के लिए अपनी पूरी शक्ति लगा देंगे।"

"किन्तु क्या इस का यह अर्थ है महाराज कि आप एक निरपराध व्यक्ति के प्राण ले लें?"

"नहीं रानी! हम चाहते हैं कि गुलाबसिंह हमारे कार्य में बाधा न डाले। एक छोटे पद वाले व्यक्ति को राजकन्या नहीं दी जा सकती। इस के अतिरिक्त यदि कमलिनी इस राज्य में ही रही तो कोई न कोई संकट यहाँ सदैव उपस्थित रहेगा और हमारा पुत्र राज्य नहीं कर सकेगा। कुसुम, हम ने गुलाब को निर्वासित करने की सोची है।"

रानी ने फिर ज़ोर लगाया—"महाराज! गुलाबसिंह जैसे वीर को खो बैठना कहाँ की समझदारी है। विक्रम को खोया यही बहुत है। कल यदि कोई संकट आ पड़ा तो नायक आप के काम आयेगा।"

राजाधिराज ने देखा कि रानी अपने आग्रह को नहीं छोड़ रही है। तब उन्होंने दूसरी चाल चली। बोले—"कुसुम, तुम बहुत भोली हो। अभी तक तुम में बच्चों का सा भोलापन है। तुम्हें कुछ भी नहीं मालूम है। हम तो समझते थे कि लड़की का हाल उस की माँ को पहले ज्ञात हो जाता है किन्तु यहाँ उल्टी बात हुई है।" रानी उत्सुकता से सुनने लगी। उस ने कमलिनी

के रोने का हाल महाराज से न कहा और चुपचाप सुनती रही।

नरेन्द्र ने कहा—"जानती हो, इस दुर्ग में नदी की ओर एक झरोखा है।"

"हाँ, हाँ" चौंक कर रानी ने धीरे से कहा और महाराज के पास सट कर बैठ गई। उस की आतुरता बहुत बढ़ गई थी।

नरेन्द्र ने कहा—"नदी को पार कर के गुलाबसिंह उस झरोखे पर पहुँचता है और तुम्हारी लड़की से प्रेम करता है।"

रानी एकदम सहम गई। कुछ देर तक घबरा कर चकित हरिणी सी देखती रही और बोली—"इतना साहस !"

महाराज ने कहा—"हाँ ! तुम्हीं बताओ कुसुम, यदि यह बात प्रकट हो जाये तो हम क्या मुँह दिखायेंगे ?"

नरेन्द्र के इतना कहने पर भी माँ ने अपनी लड़की का पक्ष नहीं छोड़ा। आँखों में प्रेम भर कर उस ने दोनों हाथ अपने पति के कन्धों पर रख दिये और बोली—"महाराज ! जवानी अन्धी होती है। उसे उमड़ती हुई नदी भी नहीं रोक सकती। आप सोचिये, प्रेम करना कहीं पाप है क्या ? गुलाबसिंह वीर युवक है और कमलिमी आप की वीर कन्या। क्या आप को अपने वे दिन याद नहीं आते जब रात भर नींद नहीं आती थी ?"

अब की बार रानी ने बड़ी मीठी मार की। महाराज मौन हो कर उस की ओर देखते रहे। रानी अपनी विजय पर मुस्कराने लगी। किन्तु नरेन्द्र को ज्यों ही गुलाब का ध्यान आया, वे फौरन सँभल गये और बोले—"नहीं रानी। गुलाबसिंह हमारी आस्तीन का साँप है। यदि हम ने उसे बाहर नहीं

निकाला तो तो एक न एक दिन वह हमें काट कर ही रहेगा। उस के गागरोन में रहने से किसी दिन हमारे वंश में कलंक लग जायेगा। फिर भी यदि तुम आग्रह करती हो तो हम केवल तीन वर्ष के लिये उसे निर्वासित करते हैं। इस बीच में हम अपनी लड़की का विवाह भी कर देंगे और अवधि समाप्त होने पर गुलाबसिह को पुनः अपनी सेना में भर्ती भी कर लेंगे। देखा कुसुम, साँप भी मर गया और लकड़ी भी नहीं टूटी। बस यही हमारा अंतिम निर्णय है।"

★

चौदहवां परिच्छेद

आज रात को गुलाबसिंह ने जीवन में पहली बार यह अनुभव किया कि वह अपने घर में बन्दी है। स्वामिभक्ति दिखाने पर उस के साथ इतनी कठोरता का बर्ताव किया जायेगा ऐसी उसे आशा न थी। रात भर उसे नींद नहीं आई। मदनसिंह से बातें कर के जैसे तैसे वह अपना समय काट रहा था। मदन भी परेशान था। पता नहीं सवेरे क्या दण्ड मिलेगा। यह विचार दोनों को विचलित कर रहा था।

मदन बोला—"देखो गुलाब। हम ने तुस से पहले ही कहा था कि गागरोन मत चलो। हमारे साथ द्रव्य भी इतना था कि यदि हम चाहते तो अपने साथियो समेत आराम से गुजर बसर कर सकते थे। तुम अपने आप मौत के मुँह में चले आये। तुम ने अपने पैरों पर अपने हाथ से कुल्हाड़ी मारी है।"

"क्या कहूँ मदन" गुलाब ने हताश होकर कहा—"मेरी स्वामीभक्ति ही मुझे यहाँ तक खींच लाई।"

"ऐसी स्वामीभक्ति भाड़ में जाये। जब तुम्हारा स्वामी तुम्हारी जान लेने को उतारू है तो तुम क्यों अपनी गर्दन उस के आगे कर रहे हो। तुम्हें ईंट का जवाब पत्थर से देना चाहिये। सुबह होते ही देख लेना कि यदि इस राजा ने कोई ऊट-पटाँग हुक्म दे डाला तो एक ओर मेरी तलवार होगी और

दूसरी ओर उस के सिपाही। राजपथ पर यदि लाशें न बिछा दूँ तो मेरा नाम मदनसिंह नहीं। हमारे घोड़े उन लोगों की छातियों पर दौड़ कर निकलेंगे।"

गुलाबसिंह चुप था। कुछ देर में वह बोला—"मुझे प्राण दण्ड का भय नहीं है मदनसिंह। केवल कमलिनी की चिन्ता है। उस के वे शब्द मुझे बार बार याद आते हैं जब उस ने मुझ से कहा था—"मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगी। मुझे कहीं भुला मत देना।"

"शाबास, अब तू रास्ते पर आया है" मदन ने कहा।

'लेकिन आग तो लग चुकी। अब कुँआ खोदने से क्या होता है।"

"नहीं, अभी आग बुझाई जा सकती है" मदन बोला।

"सो कैसे ?"

"ऐसे" मदन ने तलवार खींच कर कहा और दूसरे हाथ से गुलाब की पीठ थपथपाता हुआ बोला—"अपने बाहुबल पर विश्वास रख गुलाबसिंह। ये वे भुजायें हैं जो उमड़ती हुई नदी को जीत सकती हैं और ये ही वे भुजायें हैं जो लोगों को काट कर अलग कर देंगी। सैकड़ों लोगों को तलवारों से चीरते हुए हम तीर की तरह साफ निकल जायेंगे। किस की मजाल है जो हमारे अश्वों की टक्कर झेल सके। सारी सेना काई की तरह इस तलवार से कट जायेगी।"

गुलाबसिंह गुमसुम बैठा था। मदन का सुझाव उस की स्वामीभक्ति के संस्कारों पर हावी नहीं हो पाता था।

× × ×

अरुणोदय हुआ। सूर्य की लाल किरणों से क्षितिज रक्ताभ हो गया। गुलाबसिंह अपने कक्ष में बैठा राजपथ की

की ओर देख रहा था जिस ओर से उस के लिये आदेश आने को था। जीवन और मरण का प्रश्न सामने आने पर उस का सिर घूमने लगता था और चेहरे पर गम्भीरता छा जाती थी। थोड़ी देर में उस ने देखा कि कुछ सैनिक एक काले घोड़े को ले कर आ रहे थे। गुलाब समझ गया और द्वारपाल को द्वार खोल देने का आदेश दिया।

कुछ सैनिक अपने अध्यक्ष सहित नायक के आगे प्रस्तुत हुए। अध्यक्ष ने झुक कर अभिवादन किया और बिना कुछ कहे काले वस्त्र गुलाब को सौंप दिये। अध्यक्ष गम्भीर स्वर में राज-पत्र पर लिखी हुई आज्ञा पढ़ने लगा—"गागरोन के अधीश्वर महाराजाधिराज नरेन्द्रसिंह अपनी अश्वारोहिणी के नायक गुलाबसिंह को आज्ञा देते हैं कि वे तीन वर्ष तक गागरोन राज्य की सीमा के बाहर रहें। यदि इस अवधि से पहले उन्होंने राज्य की धरती पर पैर रखा तो वे प्राणदंड के भागी होंगे।"

"महाराज की आज्ञा" नायक ने खड़े हो कर सिर झुकाया और काले वस्त्रों को झेलते हुए बोला—"अच्छा, आप नीचे जाइये। मैं स्नान और संध्या के बाद अभी वहाँ आता हूँ।"

सैनिक प्रणाम कर चले गये। मदनसिंह ने कहा—"जान बची लाखों पाये। अब चुपचाप यहाँ से दुम दबा कर चले जाओ। इतना माल भी तुम ने खोया और अपना अपमान कराया वह अलग।"

गुलाबसिंह चुपचाप खड़ा था। मदनसिंह ने फिर कहा—"तुम यहीं रहो, मैं अपने साथियों को ले कर अभी आता हूँ।"

"अरे, मेरे लिये उन गरीबों को क्यों परेशान करते हो भाई।"

"नहीं गुलाबसिंह ! तुम अकेले नहीं जा सकते। अब तो हम सब गरीब हैं।"

मदनसिंह नीचे पहुँचते ही अपने अश्व को ले कर दौड़ पड़ा। देश निकाले की खबर सारे नगर में फैल चुकी थी। सैंकड़ों आदमी गुलाब को काले घोड़े पर जाते हुए देखने के लिए उस के मकान के पास जमा हो गये। विक्रम के साथ मुठभेड़ के बाद गुलाबसिंह के पचास विश्वस्त अश्वारोही बच गये थे जो अपने नायक के लिए सदैव जान देने को तैयार थे। उन के पास जाकर मदन ने उन में नया जोश भर दिया।

उस ने सिपाहियों को इकट्ठा किया और कहने लगा—"भाइयो, जिस राज्य में गुलाबसिंह जैसे बहादुर और निरपराध व्यक्ति को यह दण्ड दिया जाता हो और इस अपमान - साथ बाहर निकाला जाता हो, उस के बुरे दिन मुझे नजदीक दिखाई पड़ते हैं। हम ने अपनी आँखों से वीर नायक को लड़ते हुए देखा है। उसे पुरस्कार मिलना चाहिए था। उस के बजाय उस के साथ यह अन्याय किया गया है। आज गुलाबसिंह पर मुसीबत पड़ी है। ऐसे समय में उस के सच्चे दोस्त उस का कभी साथ नहीं छोड़ सकते। अगर हम यहाँ रहे तो लोग हम से क्या कहेंगे। उस के स्थान पर जो भी व्यक्ति नायक बनाया जायेगा वह हमारे साथ सख्ती करेगा और अन्याय करेगा क्योंकि हम गुलाबसिंह के साथी हैं। उस के लिए अपनी जान देने वाले हैं। हम सैनिक हैं। हमें एक न एक दिन मरना ही है। तब हम अपने बहादुर दोस्त का साथ क्यों न दें जो सचाई के रास्ते पर चलता है और जो हमारे दर्द को अपना दर्द समझता है। जब तक हमारे दम में दम है हम अपने नायक का साथ देंगे और आज इस मुसीबत में उसे अकेला नहीं छोड़ेंगे।"

मदनसिंह की बात ने सैनिकों को बहुत प्रभावित किया। वे लोग पहले ही गुलाबसिंह के लिये अपनी जान देने को तैयार रहते थे। एक सैनिक अपनी तलवार खींच कर बोला—"ठीक कहते हो मदनसिंह जी। हम सब अपने नायक के साथ चलेंगे। आज उन पर मुसीबत पड़ी है। ऐसे मौके पर हम उन्हें कभी पीठ नहीं दिखा सकते। उन के साथ रह कर हम ने अब तक कितना नाम पाया है। जब तक हमारे शरीर में खून की एक बूँद भी वाकी है हम अपने नायक के लिये मर मिटने को तैयार हैं।"

सब सैनिकों ने अपनी तलवारें खींच लीं और बोले—"ठीक है, हम अपने नायक के साथ चलेंगे। हर हर महादेव!"

मदनसिंह बोला—"शाबाश बहादुरो! नायक के साथ रहने में हमारी शान है। इसी में हमारी वफादारी है। चलो अब हम सब उन के पास चलें।"

अश्व दौड़ने लगे। कुछ देर बाद वे अपने नायक के घर के सामने आकर खड़े हो गये। मदनसिंह अपने एक साथी को घोड़ा सौंप कर मकान के भीतर पहुँचा। उसे तुरन्त ज्ञात हो गया कि प्रधान सेनापति के द्वारा नियुक्त किये गए चौकीदार जा चुके थे। मकान खाली था और गुलाबसिंह शायद प्रस्थान की तैयारी कर रहा था। आगे बढ़ते ही वह सहसा रुका। उस ने देखा कि कोने के एक छोटे से कमरे में दो स्त्रियाँ घूंघट निकाले खड़ी थीं। शायद वे कुछ ही देर पहले आई थीं। मदन को देख कर चम्पा ने संकेत से उसे बुलाया और उस के पास आने पर बोली—"हम अभी आई हैं। कुमार क्या कर रहे हैं? देखो, किसी को पता न लगे।" दूसरे क्षण युवती का घूँघट उठा कर वह बोली— "ये हैं आप की।"

मदन ने घबरा कर दोनों की ओर देखा।

"कान्ति" चम्पा बोली "क्यों, अब भी नहीं पहचाना ?"

"वाह, खूब रही" मदन ने कहा और युवती की ओर देखा। कान्ति ने लज्जा भरी दृष्टि से नमस्कार किया और आँखें नीची कर लीं।

चम्पा बोली—"मुझे कुमार के पास जाना है। राजकुमारी जी ने पत्र भेजा है। आज तो आप जा ही रहे हो। कुछ देर तुम दोनों यहीं बैठो। मैं जाती हूँ। अच्छा।" वह चली गई।

मदन कुछ मुस्कराने लगा। वह बड़ा निर्भीक और साहसी युवक था। युवती की आँखें ज़मीन में गड़ी हुई थीं। मदन ने कहा--"मैं तीन वर्ष के लिए बाहर जा रहा हूँ। आज तो मुझ से बोलो कान्ति! यदि आज नहीं बोलीं तो फिर कब बोलोगी ?" उस ने हाथ बढ़ा कर कांति का मुँह ऊँचा किया।

हाथ लगते ही युवती सहम गई किन्तु उस ने साहस कर मदन की ओर देखा। आँखें चार हुई। एक क्षण तक उन्मत्त की भाँति दोनों एक दूसरे को देखते रहे। युवक ने सहसा युवती को अपने भुजपाश में बाँध लिया। यही उस की जीत थी।

× × ×

चम्पा न गुलाबसिंह के आगे कमलिनी का पत्र प्रस्तुत किया। नायक के हृदय में वियोग उमड़ा पड़ रहा था। भावना की एक आँधी आ रही थी। काले वस्त्र पहने वह प्रस्थान की तैयारी में था। चम्पा को देख कर उस ने केवल एक प्रश्न किया "राजकुमारी को कैसे पता लगा चम्पा ?"

"रानी जी ने स्वयं बताया था कुमार। राजकुमारी जी ने निश्चय कर लिया था कि यदि महाराज ने प्राणदण्ड का

आदेश दिया तो वे भी अपना जीवन नष्ट कर देंगी।"

"ओह, मेरे लिये इतनी बड़ी आहुति" कह कर वह पत्र पढ़ने लगा। पत्र में लिखा था—

प्राणनाथ !

आज आप जा रहे हैं। परिस्थियाँ ऐसी हैं कि मैं आप के दर्शन नहीं कर सकी। विधाता ने मुझे ऐसे घर में जन्म दिया जहाँ से निकलना राजवंश में कलंक समझा जायेगा। काश मैं एक गरीब की लड़की होती। आप के साथ बाहर चली जाना कौन बड़ी बात थी। तलवारों की छाया में आप मुझे निकाल कर ले जा सकते थे। किन्तु मैं विवश हूँ। मुझे कोई स्वतंत्रता नहीं। जब मुझ पर कोई विपत्ति पड़े तो मुझे भूल मत जाना। मैं सदा के लिये आप की हो चुकी हूँ। यदि पिता जी ने मुझे किसी और को सौंपने का प्रयत्न किया तो मैं अपने प्राण दे दूँगी। पता नहीं ये दिन कैसे कटेंगे। मैं प्रतिदिन आप की प्रतीक्षा करती रहूँगी।

अभागी,
कमलिनी।

पत्र पढ़ते पढ़ते गुलाब का जी भर आया। पत्र के प्रत्येक शब्द में उसे राजकुमारी का कंठस्वर सुनाई पड़ता था। आँसुओं के वेग को रोक कर वह उत्तर लिखने बैठा—

"प्राणप्रिये।

महाराज की आज्ञा मान कर मैं जा रहा हूँ। तुम्हारे प्रेम को मैं कभी नहीं भूल सकता। मेरा शरीर चाहे तुम से दूर रहे किन्तु आत्मा तुम से दूर नहीं रह सकती। हम दोनों अब एक प्राण हैं। तुम्हारा जीवन मेरा जीवन है। मेरे जीते जी तुम्हारे

कौन हाथ लगा सकता है। तुम निश्चिन्त रहो। यदि जरूरत हुई तो मैं अपने प्राण दे दूँगा। मैं जल्दी ही आऊँगा। तुम्हारी याद मुझे सदैव आती रहेगी। तुम्हारे बिना मेरा जी नहीं लग सकता। कमलिनी, तुम किसी बात की चिन्ता मत करना।

तुम्हारा जीवन साथी,

गुलाब।

उस ने पत्र को दुबारा पढ़ कर चम्पा को सौंप दिया और कहा "अच्छा तो चम्पा, अब मैं चलूँ। प्रस्थान का समय हो गया। कमलिनी से नमस्कार कह देना।"

आँसू भर कर चम्पा ने पत्र को सँभाला और बोली—"अच्छा कुमार। सँभल कर जाना। यदि कभी कोई जरूरत हो, मेरे पास सूचना भेज देना," कुछ रुक कर वह फिर बोली—"किंतु ठहरो, आज मेरे साथ कान्ति भी आई है। नीचे बैठी है। मैं अभी बुला लाती हूं। आप कुछ देर यहीं बैठिये।"

चम्पा नीचे गई। उस ने देखा कि मदनसिंह कान्ति के कंधे पर हाथ रखे बैठा था। कान्ति कह रही थी—"क्या आप यहाँ नहीं रह सकते ?"

"नहीं कान्ति। इस मुसीबत में गुलाब को मैं अकेला नहीं नहीं छोड़ सकता! उस के कारण आज मैंने तुम्हें पाया और उस के ही कारण मुझे राज्य से बाहर जाना है। विश्वास रखो, उस के साथ मैं यहाँ फिर आऊँगा।"

इतने ही में चम्पा खाँसती हुई भीतर आ गई। कांति सँभल कर बैठ गई। वृद्धा दासी दोनों को लेकर गुलाबसिंह के पास गई।

"आइये कान्ति जी। आप मुझ गरीब के घर पर आईं।

इस का बड़ा आभार मानता हूं।"

"आप के दर्शन करना तो मेरा सौभाग्य है। वीर सेनानायक से मिलने के लिये मैं बहुत दिनों से उत्सुक थी।"

"मुझे सेनानायक न कहिए" गुलाब ने कहा—" मैं राज्य का एक अपराधी हूं। एक निर्वासित सैनिक हूं। इसीलिए तो मैंने काले कपड़े पहिने हैं।"

"ईश्वर की इच्छा है। मैं तो इसे न्याय नहीं समझती। आप तीन वर्ष के लिए जा रहे हैं। हमारी राजकुमारी जी की क्या दशा होगी" कह कर वह रुक गई।

"लेकिन किया क्या जाए" गुलाब ने धीमी आवाज में कहा उन का यहीं रहना अच्छा है। हाँ किन्तु यह तो बताइए आप क्यों नहीं मदन के साथ चलती हैं ? आप को कौन रोकता है ?"

"क्षमा कीजिए कुमार" युवती ने साहस कर कहा— "राजकुमारी को मैं इस दशा में नहीं छोड़ सकती। जिन्होंने मुझ गरीब और असहाय लड़की को इतना सम्मान दिया और सदा अपनी आँखों पर बिठाए रखा उन्हें मैं इस मुसीबत में कैसे छोड़ सकती हूं।"

"किन्तु आप ने अपने को गरीब क्यों कहा कान्ति जी ? राजकन्या के पास जो रहे वह गरीब कैसे ?"

"नहीं कुमार ! आप को मेरा हाल विदित नहीं है। मैं एक निर्धन सिपाही की लड़की हूँ। मेरे पिता एक युद्ध में वीर गति को प्राप्त हुए। मेरी माँ मुझे इसी चम्पा को सौंप कर उन के साथ सती हो गई। उस समय मैं केवल चार वर्ष की थी। चम्पा ने ही मुझे पाल पोस कर बड़ा किया है। मेरे भरण-पोषण के लिए चम्पा अन्तःपुर में जा कर दासी बनी और इस ने ही मुझे राजकुमारी की सहेली बनवाया।" कान्ति कृतज्ञता

से वृद्धा की ओर देख रही थी।

"वाह री चम्पा नानी!" मदन ने हँस कर कहा—"तेरे अहसान को मैं भी नहीं भूल सकता।"

अपनी प्रशंसा सुन कर दासी ने संकोच से सिर झुका लिया। सहसा उसे कुछ ध्यान आया और अपने आँचल की गाँठ खोल कर उस ने एक हीरकजटित जगमगाती हुई अँगूठी निकाली और गुलाबसिंह को दे दी। अँगूठी पहचानते ही गुलाब ने उस का चुम्बन किया और उसे पहन लिया। साथ ही अपनी अँगूठी निकाल कर चम्पा को सौंप दी और बोला—"अच्छा, समय हो गया। अब हमें जाना ही होगा।"

मदन ने कहा—"अच्छा, कान्ति फिर मिलूँगा। चम्पा नानी नमस्ते।" दोनों स्त्रियों के आँसू गिरने लगे।

गुलाब ने बाहर आ कर देखा कि उस के साथी उस के साथ चलने को तैयार खड़े थे। सैंकड़ों नर नारी गुलाब को विदा करने के लिए राजपथ पर बड़ी दूर तक पंक्ति बाँधे खड़े हुए थे।

नायक ने कुछ अवरुद्ध स्वरों में अपने साथियों से कहा—"प्यारे दोस्तो! तुम्हारी दोस्ती का अहसान मैं कभी नहीं भूल सकता। मुझ गरीब का साथ देने के लिए तुम कितना संकट झेल रहे हो। तुम्हारे लिए मैं अपना सर्वस्व अर्पण कर दूँगा। आज हमें अपनी मातृ भूमि को छोड़ कर जाना पड़ रहा है। भाग्य की जैसी इच्छा होगी वैसा होगा। चलो बहादुरो, अब हमारा यहाँ ठहरना ठीक नहीं।" अश्वारोही चल पड़े। आगे गुलाबसिंह और मदनसिंह जा रहे थे और पीछे पाँच पाँच की पंक्ति में उन के साथी थे।

गुलाबसिंह ने बड़ी कृतज्ञता से मार्ग के नागरिकों को प्रणाम किया। कुछ देर में वे सब नगर से बाहर चले गये।

पन्द्रहवां परिच्छेद

"क्यों गुलाम अली ? क्या खबर है ?"

"हुजूर का इक़बाल बलन्द रहे। गागरोन के राजा नरेन्दर सिंह ने अपने रसाले के हाकिम गुलाबसिंह को तीन बरस के लिए रियासत से बाहर निकाल दिया।"

"शाबास, बहुत खूब। अब की दफा तुम बड़े पते की खबर लाये। यह लो तुम्हारा इनाम।" नवाब ने दो अशर्फियाँ निकाल कर उसे दीं।

"इस से बेहतर और क्या ख़बर हो सकती है। क्यों छीतर खाँ ?,,

"जी हाँ हजूर। बजा है। अब तो गागरोन फ़तह करना चुटकियों का खेल है। लेकिन उसे निकालने का सबब क्या हुआ ?"

"क्यों गुलाम अली ?"

भेदिए ने नबाब की ओर मुँह कर के कहा—"हजूर, वहाँ ऐसी अफवाह थी कि परधान मंतरी की उस से अदावत है। विकरमसिह के मरने पर वह और भी ख़फ़ा हो गया। उसी ने राजा से कह कर उसे निकलवा दिया।"

"चलो अच्छा हुआ। गलाब हमारे रास्ते का भी काँटा था। ख़ुदा के फ़ज़्ल से वह खुद बखुद साफ़ हो गया।"

"हजूर को आज का दिन मुबारक हो। आज खुशियाँ मनाई जावें और गागरोन की तरफ कूच करने का हुक्म जल्द फरमाया जावे।"

"हाँ छीतर खाँ, अब तो बरसात करीब करीब खत्म होने को है। इस के बाद हम फ़ौरन कूच बोल देंगे। अच्छा तुम अभयसिंह को बुलाओ। यह खुश खबरी उस को भी सुनाई जाए।"

अभयसिंह युद्धस्थल से भाग कर गगनपुर आ गया था। उस ने विक्रम का बदला लेने का निश्चय कर लिया था। साथ ही उस का मोतियों का हार सुन्दरी कान्ति के गले में पड़ने को उत्सुक था। वह हार विक्रम की मित्रता की एक ही निशानी थी। नवाब के पास आ कर वह बोला—"नवाब साहब को बधाई है। अब तो गागरोन जीतना कोई बड़ी बात नहीं है!"

"हाँ दोस्त। तुम्हारे जैसे भरोसेदार और वफादार शख्श की मदद से हम उसे दस्तयाब करेंगे। वहाँ के हालात और वहाँ की फौज से तुम खूब वाकिफ हो।"

"जी हाँ नवाब साहब! आप निश्चिन्त रहिए" अभय ने कहा—"सब काम बात की बात में हो जाएगा। किन्तु आज मेरी एक छोटी सी विनती है। अपराध क्षमा हो तो कुछ निवेदन करूँ।"

"हाँ, हाँ, जरूर। इस में छिपाने की क्या बात है। तुम हमारे पक्के दोस्त हो। इस के अलावा हम अपने महमानों से बेतकल्लुफ हँसी मज़ाक करते हैं।"

"अच्छा तो नवाब साहब। मैं सब कहे देता हूँ। मैं तो बड़ा निर्भीक वक्ता हूँ। मेरा नाम ही अभयसिंह है। मैं आप की

शरण में एक और भी उद्देश्य ले कर आया हूँ। केवल अपने मित्र के बदले के लिए नहीं।"

"वह क्या ?"

"वह यह है कि जब आप गागरोन जीतें और वहाँ की राजकुमारी से विवाह करें तो उस की सहेली मुझे देने की प्रतिज्ञा करें।"

"अरे यह कौन सी बड़ी बात है" फैय्याज़ खाँ ने हँस कर कहा--"यह तो हम कोई चीज़ ही नहीं समझते। हम तो तुम्हें और भी ज़ियादह इनाम देंगे। हमारी फतह के बाद तुम्हें गागरोन का सबेदार बनाया जाएगा।"

अभयसिंह प्रसन्नता से फ़ल उठा। बोला—"आप की महरबानी है नवाब साहब। मैं तो आप की शरण में हूँ। आज से मैं आप का सेवक और आप मेरे स्वामी हैं। अब मेहमानदारी का रिश्ता खत्म हुआ। आज से मैं हज़ूर का ताबेदार हूँ।"

"अच्छा तो यही सही अभयसिंह। हमें मंज़ूर है। बहरहाल हम तुम्हें सिपहसालार का ओहदा देते हैं।"

"जो हुक्म हज़ूर, ! गरीबनवाज़ !" अभयसिंह ने सिर झुका कर सलाम किया ! कुछ देर बाद जब वह चला गया तो छीतर खाँ बोला—"हज़ूर, एक नए शख़्श के ऊपर एतबार करना खतरनाक होता है। पता नहीं अभयसिंह किस वक्त गिरगिट की तरह रंग बदल जाए।"

"ठीक है छीतर खाँ" नवाब ने कहा—"हम इसे खुद महसूस करते हैं। तुम्हारे मुकाबले में हम उस की कोई क़द्र नहीं करते। तुम इतमीनान रक्खो। जंग के बाद हम उसे अच्छी तरह समझ लेंगे।"

"और हजूर, खता मुआफ हो, मेरी इल्तिजा बस यही है कि गागरोन की शहजादी के पास जो लड़की है उस कनीज़ को अगर"—कह कर चुप हो गया।

"हाँ हाँ वह तुम्हें ही दी जाएगी। तुम वेफिक्र रहो! हम ऐसा ही करेंगे।"

"हज़ूर की जैसी मर्ज़ी" कह कर छीतर खाँ ने सिर झुकाया।

रात को फैय्याज़ खाँ ने खूब खुशियाँ मनाईं। नाच गानों से महफिल दमक उठी। मोतियों की चमक और इत्र की महक से लोग खोए खोए बैठे रहे। अभयसिंह ने भी खूब मदिरा पी। फैय्याज़ खाँ ने नर्तकियों को बहुत सा इनाम तकसीम किया।

× × ×

गागरोन से प्रस्थान के पश्चात् गुलाबसिंह को अपने तथा साथियों के भरण-पोषण की चिन्ता हुई। पचास और दो, बावन लोगों का उद्योग के बिना कैसे काम चल सकता था। दोपहर को वे वन में एक स्थान पर ठहर गए। वृक्षों की घनी छाया में बैठ कर आपस में बातें करने लगे।

"भाई अब लूटमार के बिना काम नहीं चलेगा" मदनसिंह ने कहा—"सिपाही को और आता ही क्या है—मरना या मारना।"

एक सिपाही बोला—"जिस राजा ने हमारी यह हालत बनाई—हमें दाने दाने को मजबूर किया, उसे हम नाकों चने चबा देंगे।"

गुलाबसिंह ने समझा कर कहा—"गागरोन की प्रजा ने हमारा क्या बिगाड़ा है। राजा की कठोरता का बदला निर-

पराधे प्रजा से लेना कहाँ की मनुष्यता है। गागरोन हमारी मातृ भूमि है। इस की धूल में खेल कर हम बड़े हुए हैं। क्या आज हम इसी को अपने पैरों से रौंदना प्रारम्भ करें? यह असंभव है।"

"तो फिर हम सब क्या पानी में डूब जायें? हमारे पास और चारा ही क्या है" मदन ने कटाक्ष किया "हमारा पेट भरने की और क्या तरकीब हो सकती है?"

"तरकीब हो सकती है" गुलाब ने कहा—"यहाँ से कुछ दूर गगनपुर राज्य की सीमा मिलती है। यदि लूटमार ही करनी है तो वहाँ की जा सकती है।"

"क्यों, उन्होंने क्या बिगाड़ा है" मदन ने फिर आक्षेप किया।

"तुम्हें पता नहीं है" नायक ने समझाया "वहाँ का नवाब अपनी फौज बढ़ा रहा है। मैं जानता हूँ कि वह गागरोन पर आक्रमण करने की योजना बना रहा है। यदि हम वहाँ पहुँच जायें तो उस की सारी मीठी मीठी कल्पनायें धूल में मिल जायेंगी। वहाँ हम उस के खजानों, उस की रसद और उस की सेनापर छापा मारेंगे। किन्तु याद रखो कि कोई सैनिक किसी स्त्री या बच्चे या निर्धन या अनाथ व्यक्ति को नहीं सताए। हमारा काम नवाब की योजना को विफल करना होगा, वहाँ की प्रजा को सताना नहीं।"

रात होते होते वे गगनपुर की सीमा में प्रवेश कर गए।

★

सोलहवां परिच्छेद

गुलाब का पत्र कमलिनी ने हृदय से लगा लिया। आँखों में आँसू उमड़ आये। वड़ी देर तक वह अपने प्रेमी की अँगूठी को निहारती रही और उसे पहन कर उस ने एक लम्बी साँस ली। कान्ति मौन थी और चम्पा भी मौन।

थोड़ी देर वाद रानी अपनी लड़की के पास आई। कमलिनी की वेदना का अनुमान कुसुम ने भली भाँति लगा लिया था। उसे अपने पास वैठा कर बोली—"देखो वेटी! किसी बीती बात पर अफसोस करने से कोई फल नहीं निकलता। जवानी में थोड़ी बहुत भूलें सब से होती हैं। तुम तो खुद सयानी हो। महाराज तुम्हारा सम्बन्ध किसी ऊँचे राजवंश में करेंगे। तुम किसी बड़े राज्य की महारानी वनोगी। अपनी वेटी से सब को स्नेह होता है कमलिनी। हमें वही करना चाहिये, जिस से हमारे वंश की मर्यादा सदैव वनी रहे।"

कमलिनी चुप थी। मुँह लटकाये जमीन की ओर देख रही थी। रानी का एक एक शब्द तलवार की धार की तरह उस के हृदय पर आघात करता था। अपनी माँ के शब्द उसे जीवन में कभी इतने कटु नही लगे। वह सोच रही थी कि मैंने ऐसा कौन सा अपराध किया था जिस से मुझे इस घर में जन्म लेना पड़ा। मुझे प्रेम करने की भी स्वतंत्रता नहीं। खुली हवा में फिरने की

स्वतंत्रता नहीं। यह धन, यह वैभव और यह आदर किस काम का यदि मैं सुख की नींद नहीं सो सकती।

× × ×

प्रधान मंत्री को गुलाबसिंह के निर्वासन से कुछ सांत्वना मिली। उन्होंने राजाधिराज से आश्वासन ले लिया था कि तीन वर्ष के बाद यदि गुलाबसिंह लौट भी आये तो उसे कोई ओहदा नही दिया जाये। उधर उन्होंने स्वयं भी निश्चय किया कि चाहे तीन वर्ष पहले चाहे तीन वर्ष बाद, जब भी वह वापस आये तब किसी न किसी युक्ति से उस की जीवन-लीला समाप्त करा दी जाये।

× × ×

कुछ ही दिनों में नबाव फैय्याज खाँ को सूचना मिली कि गुलाबसिंह गगनपुर का एक बाजार लूट कर ले गया और अनेक सिपाहियों और पहलवानों का काम तमाम कर गया। सिपाहियों के पास जितने हथियार थे, डाकू उन्हें छीन कर ले गये। नवाब के क्रोध का ठिकाना न रहा। बोला—"उस नाचीज़ की इतनी मजाल! उस गीदड़ का गोश्त मैं कुत्तों से नुचवा दूंगा।"

गुलाब और उस के साथियों को पकड़ने के लिए काफी लोग नियुक्त किये गये लेकिन किसी की दाल नहीं गली। विद्रोही पहाड़ों की गुफाओं में और अनेक अज्ञात स्थानों में छिप कर रहते थे। इधर उधर जंगल में धावा मार कर छिप जाते थे। घने जंगल में उन्होंने ऐसे रास्ते बनाये जिन से नबाव के सैनिक परिचित नहीं थे। चाहे दिन हो या रात, वे डाका डाल कर अपने निश्चित स्थानों पर पहुँच जाते थे। लूट के माल को गुलाबसिंह अपने साथियों में बाँट देता था। कई बार वह निर्धन लोगों को रुपया देता और असहाय लोगों की सहायता

के लिए सदैव तैयार रहता था। लोग उस का आदर करने लगे। उस की वीरता और दानशीलता की प्रशंसा में अनेक लोकगीत बन गये और चारों ओर उस की प्रसिद्धि बढ़ने लगी।

गुलाब ने छापामारी द्वारा नवाब की सेना को बहुत परेशान किया। उस के आक्रमण के सारे मन्सूबे ढीले पड़ गये। जो भी सैनिक उस के गिरोह से लड़ने जाते उन्हें इस प्रकार घेरा जाता था कि बहुत कम लोग भाग कर अपनी जान बचा पाते थे। लूटमार का हाल सुनते सुनते नवाब की नाक में दम हो गया। उस ने गुलाबसिंह को मारने के लिए पच्चीस हजार रुपये का पुरस्कार घोषित किया।

इस प्रकार कई महीने बीत गये। गुलाब और उस के साथी धीरे धीरे लुटेरों के जीवन से ऊबने लगे। उन का जीवन सदैव संकटमय बना रहता था। सर्दी निकल गई। बसन्त निकल गया। बहुत सी धनराशि उन के पास जमा हो गई थी।

ग्रीष्म के जलते हुए प्रहर में इतनी दौड़धूप करना उन्हें अखरने लगा। साथियों को अपने परिवार की याद आने लगी। वे लोग सोचते थे कि यदि वे इतना धन लेकर लौट जायें तो सारा जीवन आनन्द से व्यतीत हो जाये और उन के बाल बच्चे भली भांति पल जायें। गुलाबसिंह अपने आप को गागरोन के समाचारों मे अवगत रखता था। कहीं ऐसा न हो कि वहाँ चुप-चाप किसी राजा को आमंत्रित किया जाये और कमलिनी का हाथ उसे सौंप दिया जाये। उसे पता चला था कि राजाधिराज अस्वस्थ हैं और राजकुमारी के विवाह की चर्चा शिथिल हो गई है। उस के विवाह की अपेक्षा नरेन्द्र के रोगोपचार की ओर अधिक ध्यान दिया जा रहा था। फिर भी गुलाब की चिन्ता

कम नहीं हुई। कमलिनी का प्रेम उसे पागल बना देता था। गर्मी के कारण उस ने लूटमार कम कर दी और कुछ लोगों को इसी कार्य पर नियुक्त किया कि वे नित्य इधर उधर घूम कर ताज़े समाचार मालूम कर लायें।

उधर नवाब फैय्याज खाँ को अपनी योजना की विफलता से दुःख होता था। वह सोचता था—"हम नवाब हो कर इतना भी नहीं कर सके कि अपनी पसंद की लड़की को अपनी बेग़म बना सकें। लाहौल वलाक़ुबत। खुदा ने हमें इतनी बड़ी हक़ूमत दी, हमें इतनी दौलत बख्शी, क्या वह हमारी एक दुआ कबूल नहीं करेगा। काश हम नवाब न हो कर उस शहजादी के एक गुलाम बने होते। हमें उस की शराबी आँखें देखना तो नसीब होता। अय मोहब्बत! तूने हमारा सारा तअस्सुब दूर कर दिया।"

★

सत्रहवां परिच्छेद

राजकुमारी कमलिनी के दिन काटे नहीं कटते थे। अधिकतर समय वह अपनी सहेली और दासी से बात करने में व्यतीत था। सुबह शाम शिव की उपासना करती। दिन में कभी कोई पुस्तक पढ़ती, कभी गीत गाती और कभी बैठी-बैठी आँसू बहाने लगती थी। तीन वर्ष कटना असंभव जान पड़ता था। धीरे धीरे युवती की आशंकाएँ भादों के अँधेरे की तरह बढ़ने लगीं। कही ऐसा न हो कि गुलाब उसे भूल जाये। युवक का क्या भरोसा--जहाँ कोई सौंदर्य देखा और वह आसक्त हुआ। कहीं ऐसा न हो कि उस के पिता उस के विवाह का नारियल किसी राजा के पास भेज कर उसे वचनबद्ध कर लें। कहीं ऐसा न हो कि चुपचाप किसी को वहाँ बुला लिए जाए, गुलाब को पता भी न लगे और उसे अपनी छाती में कटार भोंकनी पड़े।

इन्हीं अशंकाओ से युवती विह्वल होने लगी। प्रिय का वियोग असहनीय था। धन और वैभव सम्पन्न राजकुमारी को अपने जीवन में इतनी वेदना का पहले कभी अनुभव नहीं हुआ था। एक रात को वह बहुत अधीर सी लेटी हुई थी। दासी को बुलवा कर पैर दबवाने लगी। किन्तु कहाँ वृद्धा दासी के शिथिल हाथ और कहाँ राजकुमारी के उद्दीप्त यौवन की लहराती

हुई उमंगे। युवती को नींद नहीं आई। बोली—"हाय चम्पा! मुझ से नहीं रहा जाता। क्या उन के पास संदेश भेजने का कोई उपाय नहीं है?"

"क्या बताऊँ राजकुमारी जी। मुझे तो कोई उपाय नहीं सूझता। आज कल सारे गुप्तचर प्रधान मंत्री के हाथ की कठ-पुतली हैं।"

"अरी रुपये पैसे की कोई चिन्ता न कर। जैसे भी हो इस का प्रबन्ध तो करना ही होगा। मेरी हालत वहुत बुरी है। मुझे घंटो तक नींद नहीं आती।"

दूसरे दिन अवकाश पा कर चम्पा शहर में इधर उधर स्त्रियों तथा राजभृत्यों से मिलने गई किन्तु सौदा नहीं पटा। दूसरे दिन बड़े परिश्रम और बड़ी कानाफ़ूसी के बाद दो विश्वस्त गुप्तचर उस के पास लाये गये। वृद्धा ने उन पर पुत्रवत् स्नेह दिखाया और चुपके से दस दस अशर्फ़ियाँ उन के हवाले करीं।

सारी बातें उस ने उन्हें मुस्कराहट के साथ समझाई और और फिर धीरे से उन के पास खिसक कर कहा—"जब तुम गुलाबसिंह जी से मिलो तो उन से कहना कि बरसात शुरु होने वाली है और राजकुमारी जी झरोखे में उन की प्रतीक्षा करेंगी।"

यह सुन कर गुप्तचर सन्न रह गये और राजकुयारी के नाम से उन के मन चंचल हो उठे। वृद्धा ने फिर कहा—"देखो यह बात प्रकट न होने पाये। जब तुम लौट कर आओगे तो तुम्हें और इनाम भी दिया जायेगा। जो अपना काम बना कर पहले आयेगा उसे पाँच अशर्फियाँ ज्यादा दी जायेंगी।"

× × ×

एक दिन सहसा पावस ने ग्रीष्म को पराजित करने की ठानी। रात होते होते बादल घिर आये। मोर बोलने लगे और

बिजली चमकने लगी। वर्षा की पताका फहरा रही थी। गुलाब का हृदय प्रेम से उमड़ आया। उस की चौड़ी छाती में मानो एक प्रबल आँधी आ रही थी। प्रथम वर्षा के जल से स्निग्ध पृथ्वी से जो सुगन्ध आ रही थी उस के कारण उसे अपनी प्रणयिनी के उच्छ्वासों की याद आई। बरसते मेह में राजकुमारी की फूल सी कोमल देह, हवा में हिलती हुई अलकें, उस का उभरा हुआ वक्षस्थल, कोकिल कंठ, वह निर्जन झरोखा और टिमटिमाता हुआ दीप, सब उस की आँखों के आगे झूमने लगे। ठंडी हवा के स्पर्श से उसे ऐसा लगा मानो कमलिनी उस की बलिष्ट भुजाओं पर हाथ फेर रही थी। वह भाव विभोर हो गया। उस का एक एक पल कटना भारी था। ऐसा लगता था जैसे राजकुमारी से मिले युग बीत गया हो। उस ने सोचा—"मैं अपने कर्त्तव्य को बिल्कुल भूल गया। कमलिनी ने मुझे क्या लिखा था "मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगी" और मैं? मैंने उस की एक बार भी सुध नहीं ली। पुरुष का प्रेम क्या केवल इतना ही गहरा होता है? उस ने क्या सोचा होगा। न जाने इतने दिन तक उस पर क्या बीती होगी?"

प्रातः काल गुलाबसिंह ने अपने साथियों को एकत्र किया और बोला—"भाइयो, वर्षा ऋतु प्रारम्भ हो गई है। इस समय परदेसी शीघ्र अपने घर लौट जाते हैं। चारों ओर नदियों में बाढ़ आने लगती है और युद्ध की कोई संभावना नहीं रहती। इसलिये राज्यभृत्य और गुप्तचर निःशंक रहते हैं। यदि तुम चाहो तो कुछ दिनों के लिए हम लोग साधुओं के वेष में घर जा सकते हैं। तुम्हें अपने परिवार से बिछुड़े बहुत समय हो गया है। पता नहीं तुम्हारे बाल बच्चों की क्या हालत होगी। यदि तुम अपनी मातृ भूमि के दर्शन करना चाहते हो तो मुझे कोई आपत्ति

नहीं है।"

सैनिक तो पहले ही ऊब रहे थे। घर लौटने के लिए सब तैयार हो गए। वे अब केवल बत्तीस व्यक्ति थे। शेष लूटमार के समय मर चुके थे। उसी दिन साधुओं की जमात वहाँ से चल पड़ी। गले में माला, हाथ में चिमटे, देह पर भगवा वस्त्र और माथे पर तिलक। किसी गाँव के पास रुकते तो राम का नाम लेने लगते थे।

× × ×

दोनों गुप्तचर दो पृथक मार्गों से गगनपुर राज्य की ओर जा रहे थे। उन में से एक को यह टोली गागरोन राज्य की सीमा में ही मिल गई। उसे सन्देह हुआ। चोर को चोर पहचान लेता है और गुप्तचर को गुप्तचर। उस की गृद्धदृष्टि से नायक न छिप सका। वह भाँप गया कि वह साधु नहीं सैनिक है। उस की आँखो में वैराग्य नहीं था, वीरोचित उत्साह और चमक थी। उस ने साधुओं का पीछा किया और एक गाँव में जहाँ वे ठहरे थे, एक देहाती बन कर हाथ में लट्ठ लिए उन की सेवा करने का बहाना ले कर वहाँ पहुँचा और गुलाबसिंह के पास धीरे से जा बैठा। गुलाब की आकृति उस ने नजदीक से देखी और उस के कंठस्वर से उस का निश्चय पक्का हो गया। बात करते करते बोला—"महाराज, मैं तो गगनपुर जाने की सोच रहा था। आप की टोली उधर से ही घूमती हुई आ रही है। मुझे गुलाबसिंह जी को एक सन्देश देना है। उन का नाम गगनपुर में खूब प्रसिद्ध है। क्या आप को पता है कि आजकल वे किधर हैं?"

"नारायण, नारायण" गुलाब ने अपनी भौंहें तिरछी करते हुए कहा—"हमें इन बातों से क्या पड़ी है। गुलाबसिंह एक

निर्वासित व्यक्ति है यह तो हम ने सुना है किन्तु वह किधर है और उस के लिए क्या सन्देश है इस से हमें क्या बहस है ?"

भेदिए को तो अपनी बात कहनी थी। इधर उधर अपनी आँखें घुमाता हुआ धीरे से बोला—"महाराज ! यह बात बताने की तो नहीं किन्तु आप से कहे देता हूँ कि राजकुमारी ने उन्हें बुलाया है और कहा है कि वे झरोखे में उन की प्रतीक्षा करेंगी।"

गुलाब फौरन सहम गया। वह ताड़ गया कि गुप्तचर ने उसे पहचान लिया है। मन के भावों को दवा कर बोला—"नारायण हरिहर। संसार में कैसा इन्द्रजाल है। इन सुन्दरियों से भगवान् बचाए। कहाँ राजकुमारी और कहाँ वह निर्वासित सैनिक। नारी-लीला तो भगवान् भी नहीं जानते। अच्छा हुआ जो हम ने सन्यास ले लिया। इन बातों में क्या रक्खा है।"

गुलाबसिंह ने उसे ठंडा जल पिलाया और कुछ फल खाने को दिये। कुछ देर में उस ने भेदिए को चले जाने का संकेत किया। गुप्तचर अपनी जीत पर मुस्करा कर वहाँ से चम्पत हो गया।

गुलाबसिंह साथियों सहित घूमता घामता मदनसिंह के गाँव रतनपुर आ पहुँचा। वर्षा हो रही थी। नदी भरपूर थी। उस ने अपने साथियों से कहा—"दो तीन दिन हम यहीं छिपे रहेंगे। सब हाल जानने के बाद अवसर पा कर तुम लोग अपने बाल बच्चों से मिल लेना। नगर में इकट्ठे मत जाना। घूम फिर कर कुछ दिनों में हमें यहाँ से चले जाना है क्योंकि अधिक ठहरना खतरे से खाली नहीं है।"

सब लोग जैसे तैसे मदनसिंह के मकान में ठहर गए। वे अपने साथ जो थोड़े से शस्त्र छिपा कर लाए थे वे सुरक्षित स्थान

पर रख दिए गए। मदन ने कुछ शस्त्र गाँव वालों से बटोर लिये। रात को लगभग साढ़े ग्यारह बजे वह मकान से निकला और नीम का निशान देखने गया। पानी सफेदी को छू रहा था। उस ने फौरन गुलाब को साथ लिया। एक पड़ौसी के यहाँ दो घोड़ों का पहले ही प्रबन्ध कर दिया गया था। दोनों ने अपने घोड़ों के एड़ लगाई और चल पड़े। दुर्ग के पास पहुँचते ही मदन बोला—"वह देखो, दीप जल रहा है।"

"धन्यभाग" गुलाब ने खुशी से उछल कर कहा। उस का मित्र गद्गद् हो कर बोला—'राजकुमारी की साधना को कोई नहीं पा सकता, गुलाब। धन्य है उस वीरांगना को। ऐसे सघन अंधकार में न जाने कब से वह तुम्हारी प्रतीक्षा करती है। कहाँ वह राजमहल और कहाँ यह भयानक और उजड़ झरोखा। बस अब देर मत करो। नदी में सँभल कर जाना और मँझधार में घबराना नहीं। मैं इस ओर निगरानी रखूँगा।"

× × ×

बरसाती नदी की उत्ताल तरंगों को फिर से चुनौती दे दी गई। हवा साँय साँय कर रही थी और लहरें अट्टहास। किन्तु नायक प्राण रहते हार माननेवाला न था। झरोखा नज़दीक आ गया। वहीं छप छप की ध्वनि हुई और आवाज़ आई "कमलिनी ?"

"गुलाब" फौरन उत्तर मिला। अंधे को मानो आँखें मिल गईं। राजकुमारी प्रफुल्लित हो उठी जैसे किसी निर्धन को अपार धन राशि मिल गई हो। हाथ पकड़ते ही गुलाब ऊपर आ गया। प्रेम के आवेश में दोनों एक दूसरे से लिपट गये। हर्षातिरेक से राजकुमारी के आँसू भर आये और उस ने अपनी

गर्दन गुलाब के कन्धे पर झुका दी। उस के आँसू पोंछ कर युवक बोला—"तुम्हारे बिना जीना असंभव है कमलिनी। तुम्हारे लिए मुझे प्राण देने में भी हर्ष होगा।"

★

अठारहवाँ परिच्छेद

प्रधान मंत्री बैरीसाल को गुलाबसिंह के लौटने का खटका रहता था। राजकुमारी का प्रेम उन्हें विदित था। वृद्ध मंत्री को कभी यह भी अशंका होती थी कि कहीं गुलाबसिंह उन्हें सब से बड़ा शत्रु समझ कर किसीके द्वारा उन का वध न करवा दे। वर्षा के आगमन पर वे और अधिक सतर्क हो गए। उन्हें ज्ञात था कि जो पुरुष भयंकर बाढ़ वाली नदी को बात की बात में पार कर जाता हो उस के लिए सीमा पार करना क्या बड़ी बात है। अतः उन्होंने झरोखे की ओर दो गुप्तचर नियुक्त कर दिए। इस के परिणामस्वरूप दीपक का आलोक एक भेदिए की दृष्टि से न बच सका। भोले प्रेमियों को क्या पता था कि ऐसे अंधकार में भी किसी की आँखें उन पर लगी रहती हैं। दूसरी रात भी उन की प्रेम लीला होती रही और समाप्त हो गई। गुलाबसिंह नदी की ओर से निश्चिन्त रहता था। उधर मदनसिंह प्रत्येक अवसर के लिए सावधान था।

प्रधान मंत्री को सूचना मिलते ही उन्होंने खूब नमक मिर्च लगा कर सारा हाल राजाधिराज से निवेदन किया। नरेन्द्र का चेहरा क्रोध से लाल हो गया। बोले—"मंत्री जी, अब की बार हम उसे अवश्य प्राण दण्ड देंगे। न हम अपने वंश का अपमान

सह सकते हैं और न अपनी आज्ञा का उल्लंघन। गुलाबसिंह को जल्दी से जल्दी बन्दी बनाया जाये और हमारे सामने प्रस्तुत किया जाये।"

प्रधान मंत्री ने क्रोध को अधिक भड़काने के लिए कहा—"जो आज्ञा महाराज। किन्तु अपराध क्षमा हो, गुलाबसिंह को पकड़ना बच्चों का खेल नहीं है। नदी की बाढ़ में हमारा क्या बस चल सकता है। पानी में वह जिधर चाहे उधर निकल सकता है। यदि हम किनारे पर प्रबन्ध करें तो वह भला वहाँ क्यों उतरने लगा। तैरता हुआ नदी के तेज प्रवाह के साथ कोसों दूर जा सकता है। केवल एक उपाय है।"

"झरोखे में ?"

"हाँ महाराज ! वह अवश्य आएगा। हम वहाँ कुछ सैनिकों को छिपा सकते हैं। एक पुरुष को स्त्री के वस्त्र पहना कर वहाँ बिठा देंगे। आस पास दस बारह आदमी छिपे रहेंगे। ज्योंही वह ऊपर आये, एक रस्सी का फन्दा वह स्त्री रूपी सैनिक अपनी ओढ़नी में से निकाल उस के गले में डाल देगा। बस फिर क्या है। एक आवाज में सारे सैनिक उस से चिपट जायेंगे।"

"बिल्कुल ठीक है" महाराज ने कहा "किन्तु सैनिक विश्वस्त होने चाहिये। इस काम को गुप्त रूप से किया जाए। किसी को पता न लगे।"

वैरीसाल सफलता के गर्व में बोले—"पृथ्वीनाथ ! एक उपाय और है जो सब से सरल है।"

"कहिये।"

"महाराज ! ज्योंही गुलाबाबसिंह झरोखे पर चढ़े, तलवार के एक झटके से उस का सिर काट लिया जाये।" नरेन्द्र का हृदय काँप उठा। इतनी जघन्य क्रूरता ! अपनी लड़की के प्रेमी

के साथ इतना पैशाचिक व्यवहार ! सहसा उन्हें रानी कुसुम के शब्द याद आए "क्यों महारज ? क्या यही राजोचित है ? क्या कहने हैं आप के न्याय के।" वे सँभल गए। वे दृढ़ता से बोले--"नहीं मंत्री जी। यह कभी नहीं हो सकता। गुलाबसिंह यदि मारा गया तो यह बात कभी नहीं छिप सकती। यदि हमारे सैनिक न भी कहें, तो गुलाबसिंह के साथी कह देंगे। जनता में हाहाकार मच जाएगा। हम स्पष्ट रूप से आज्ञा देते हैं कि उस के प्राण लेने की चेष्टा न की जाये। सैनिकों को हमारे पास भेजना। हम स्वयं उन्हें समझायेंगे। दण्ड का निश्चय हम बाद में करेंगे। अभी उसे केवल बन्दी बनाना पर्याप्त है।"

"जो आज्ञा महाराज।"

"एक बात और है मंत्री जी" राजाधिराज ने फिर कहा—"वह रस्सी का फन्दा भी प्राणघातक वस्तु है। क्या उस के बिना काम नहीं चल सकता ?"

"नहीं पृथ्वीनाथ, यदि रस्सी गले में न डाली गई तो वह नदी में कूद पड़ेगा और उसे वापस ऊपर लाना असंभव है।"

"अच्छा तो ठीक है। सैनिकों को हमारे पास भेज देना।"

× × ×

आधी रात होने आई। कमलिनी अपनी सहेली को ले कर झरोखे की ओर चलने लगी। दोनों ने अपने हाथों और पैरों के आभूषण उतार दिए। तलवारें हाथ में लिए हुए आहट लेती हुई आगे बढ़ने लगीं। चारों ओर अँधेरा था। झरोखे से वे लगभग सौ गज़ दूर थीं कि राजकुमारी की दृष्टि सहसा झरोखे के दीपक पर पड़ी। हृदय धक् से रह गया। ऐसा लगा मानो यमराज उस के सामने खड़ा था। पसीने में तर हो गई। कान्ति की घिग्घी बँध गई। दोनों वहाँ से दौड़ कर अपने कक्ष से लौट

आईं। कमलिनी ने कहा-"हे भगवन्। यह कैसा षड़यन्त्र है। आज तो परमात्मा ही उन की रक्षा कर सकता है।" वह हाथ जोड़ कर प्रार्थना करने लगी। आँखों से आँसू टपकने लगे और कुछ ही क्षण में वह सिसकियाँ देने लगी। कान्ति भी घबराई हुई थी। चम्पा ने सांत्वना देकर कहा—"घबराइए नहीं राज॰ कुमारी जी। भगवान् उन की रक्षा करेगा। मैं अभी एक राज-भृत्य को भेज कर का पता लगवाती हूँ।" चम्पा फौरन वहाँ से चली और अपने एक विश्वासपात्र नौकर को जगा कर सब हाल उस से तुरन्त कह दिया। वह बोली-"तुम इसी समय तलवार बाँध कर वहाँ चले जाओ। हिम्मत्त से काम लेना। जैसी परिस्थिति हो वैसा करना। वहाँ जाते ही कहना कि तुम महाराज की ओर से भेजे गए हो और तुम्हें यह आदेश दिया गया है कि गुलाबसिंह के जीवन को कोई क्षति नहीं पहुँचाई जाए। वहाँ अंधेरे में तुम्हारी कौन छानबीन करने बैठेगा। यदि कोई और षड़यन्त्र हो तो जीने मरने की चिन्ता न करना। सीधे उन्हें मौत के घाट उतार कर नदी में फेंक देना। जो होगा सो देख लेंगे।"

राजभृत्य ने वैसा ही किया। वहाँ जाते ही उसे पता चल गया कि दस बारह सैनिक सशस्त्र बैठे थे। वह सब समझ गया और बोला—"मैं महाराज की आज्ञा ले कर आया हूँ। उन का आदेश है कि गुलाबसिंह के प्राण लेने की चेष्टा न की जाये"

मुख्य सैनिक ने सिर झुकाया और कहा— "महाराज से निवेदन कर दीजिये कि हम ऐसा ही करेंगें। आज संध्या को अन्नदाता जी ने हमें स्वयं बुला कर यही आदेश दिया था। आप निश्चिन्त रहिए। हम सब उन की आज्ञा का पालन करेंग।" राजभृत्य चुपचाप चला आया और सारा हाल चम्पा से

कहा जिसे सुन कर कमलिनी की जान में जान आई। फिर भी अनिष्ट की आशंका से रात भर वह कमरे में बैठी हुई भगवान् का नाम लेती रही।

× × ×

दीपक का प्रकाश देख कर गुलाबसिंह बराबर तैरता हुआ आ रहा था। पास आते ही उस ने एक हाथ से झरोखा पकड़ लिया और आवाज़ दी—

"कमलिनी ?"

स्त्री वेष में बैठे हुए चतुर सैनिक ने उत्तर दिया—"गुलाब-सिंह।"

गुलाब का माथा ठनका। आज यह अनहोनी बात कैसे हुई। कमलिनी के मुँह से गुलाब "सिंह" कैसे निकल गया। शायद वह ऊँघने लगी है। चुप क्यों बैठी है। और दिन की भाँति दौड़ कर आगे क्यों नहीं बढ़ी। इस प्रकार वह सोती तो नहीं। क्षण भर में ये सब विचार उस के मस्तिष्क में घूम गये। वह रुका ही था कि बलिष्ट सैनिक ने गुलाब का हाथ पकड़ कर ऊपर खींचा।

"हैं हैं कमलिनी ?" हाथ के स्पर्श से ही नायक को पता चल गया कि वह कमलिनी का कोमल हाथ न था। किन्तु पानी में उस के पाँव कहाँ टिक सकते थे। वह सँभला भी नहीं कि सैनिक ने उसे फौरन ऊपर खींच लिया। उस के गले में रस्सी डाल कर वह चिल्लाया—"गुलाबसिंह पकड़ लिया।"

गुलाबसिंह ने ज़ोर से उस की गर्दन दबोच कर उसे नदी की ओर घसीटा। इतने में सारे सैनिक उस से चिपट गये और गुत्थमगुत्था होने लगे। सारा झरोखा सिपाहियों से भर गया।

नायक ने दो-तीन लोगों को लात मार कर नदी में ढकेल दिया और स्वयं भी पूरी ताकत से नदी की ओर खिसकने लगा। कुछ देर में चार-पाँच आदमियों समेत गुलाबसिंह धड़ाम से नदी में गिर पड़ा और वे सब पानी में घड़ियालों की तरह एक दूसरे से चिपटने लगे। उन सब की एक साथ जल में अन्त्येष्टि होने में कोई सन्देह न था किन्तु झरोखे पर खड़े शेष सिपाहियों ने फौरन रस्सी खींचना शुरू किया जो गुलाबसिंह के गले में पड़ी हुई थी। पानी में धक्कामुक्की के कारण तीन आदमी आगे बह गये किन्तु दो सैनिक अब भी उस से चिपटे हुए थे और वे भी उस के साथ ही रस्सी खींचने पर ऊपर आ गये। पानी में श्वास-प्रश्वास बिगड़ने से और रस्सी खिचने से गुलाबसिंह बेहोश हो गया। एक सिपाही ने तलवार से उस का फन्दा काटा। कुछ देर बाद जब नायक को होश आया तो उस ने देखा कि उस के हाथ पाँव मज़बूती से बँधे हुए थे।

× × ×

प्रधान मंत्री ने झरोखे पर सैनिकों की नियुक्ति के समय प्रधान सेनापति हिम्मतसिंह से काफी देर तक परामर्श किया था। उन्होंने कहा—"सेनापति जी! पता चला है कि गुलाबसिंह आ गया है। चारों ओर प्रबन्ध कर के आया होगा। उस की प्रबन्ध शक्ति बड़ी तीव्र है। वह कभी अकेला नहीं आ सकता। वह और उस के साथी अवश्य ही आस पास कहीं छिपे होंगे। आप लगभग तीन सौ सैनिकों को पाँच छः टुकड़ियों में बाँट कर आज शाम को ही आस पास के गाँवों के लिए रवाना कर दीजिये।"

तदनुसार सिपाहियों ने आस पास के गाँवों का चक्कर लगाया। जन साधारण को क्या पता था कि साधुओं के वेष

में वहाँ सैनिकों की एक टुकड़ी छिपी हुई है। खोजते खोजते रतनपुर में पता लग गया कि तीस पैंतीस साधु एक मकान में ठहरे हुए हैं। सिपाहियों को तुरन्त सन्देह हुआ। उन के अध्यक्ष ने कहा—"ऐसी बरसात में साधुओं के घूमने का क्या प्रयोजन हो सकता है? इन को अवश्य ही पकड़ लेना चाहिये। यदि पूछताछ करने पर साधु ही सिद्ध हुए तो छोड़ देंगे। अपना क्या बिगड़ता है।"

रातों रात साधुओं के घर पर छापा मारा गया। गुलाब के साथी सोये हुए थे। अचानक आक्रमण के कारण अँधेरे में वे हथियार नहीं सँभाल सके। चिमटे हाथ में ले ले कर घर से बाहर निकले और सिपाहियों की खोपड़ियों पर फटकारने लगे। जिस के पड़ी वही औंधा हो गया। किन्तु सशस्त्र सैनिकों से वे कहाँ तक लड़ते। अनेक साधु घायल हो गये और आधे घंटे की कुश्ती में सब के सब पकड़ लिये गए। घर की तलाशी लेने पर उन के शस्त्र भी ज़ब्त कर लिए गए और रातों रात उन सब को गागरोन लाया गया। सवेरे उन्होंने देखा कि उसी कारागार में उन का नायक गुलाबसिंह भी मौजूद था। गुलाब और उस के साथियों के चेहरे उदास थे। उन्हें ऐसा लगता था कि वे अब चन्द दिनों के मेहमान हैं।

प्रातः काल सारे नगर में यह अफवाह उड़ा दी गई कि गुलाबसिंह को उस के साथियों समेत रतनपुर गाँव में तीन घंटे युद्ध करने के बाद पकड़ लिया गया है और उसे उस के साथियों सहित फाँसी के तख़्ते पर लटकाया जायेगा। सारी जनता में कोलाहल सा मच गया और बहुत से लोग तो रतनपुर गाँव में वह मकान देखने गये जहाँ पर विद्रोहियों को पकड़ा गया था।

★

उन्नीसवाँ परिच्छेद

दोपहर तक गुलाम अली ने नवाब को सूचित कर दिया कि गुलाबसिंह अपने गिरोह के साथ गागरोन में गिरफ्तार हो गया। प्रसन्नता से नवाब का मन नाच उठा। पाँच अशर्फियाँ भेदिये को देकर विदा किया और बोला—"क्यों छीतर खाँ ? अब तो हमरी पाँचों घी में हैं। जिस काँटे को निकालने के लिये हम बुरी तरह से परेशान थे वह कम्बख्त अपने आप निकल गया। हमारे मुकद्दर का सतारा बलन्द हो गया है।"

छीतर खाँ ने चापलूसी करते हुए कहा—" हजूर को आज का दिन मुबारक हो। अब जल्द से जल्द कूच का हुक्म फरमाया जाये। चन्द दिनों में गुलाबसिंह को मौत के घाट उतार दिया जायेगा। अब हमारा रास्ता बिल्कुल साफ है। कहीं कोई खतरा नहीं है।"

"यह तो ठीक है छीतर खाँ। मगर हम कुछ दिन और इन्तजार करना चाहते थे। तब तक गुलाबसिंह का फैसला भी हो जायेगा और बारिश भी बन्द हो जायगी।"

"हजूर ! बारिश की वजह से दुश्मन बिल्कुल ग़ाफिल और बेखबर है। यही तो मौक़ा है हमला करने का" छीतर खाँ बोला—"हमारी तैयारी और फ़ौजी ताक़त दुशमनों से कहीं

ज़ियादह है। उन की क्या मजाल है जो हमारी टक्कर झेल सकें। कहाँ हाथी और कहाँ भैंसा। हजूर एक बात और है।"

"क्या?"

"नबाब को खुश करने के लिये वह दबी ज़बान में बोला—" हजूर ये मौसम और ये ठंडी हवायें। आप शहज़ादी की नाज़ुक हालत का तो ख़याल कीजिये। वह किस तरह बेताब हो रही होगी। इस वक्त उस की किस्मत खुल जायेगी और आप को पा कर उस के हुस्न में चार चाँद लग जायेंगे।"

नबाब तड़प उठा। बोला—" अच्छा तो छीतर खाँ। हमें मंजूर है। जल्द से जल्द कूच बोल दी जाये। अभी कुछ दिन पहले हम ने सुना था कि राजा नरेन्दरसिंह अपनी लड़की की शादी किसी राजा से करने की कोशिश कर रहा है। अगर कोई राजा उस की मदद को आ गया तो मैदान जीतना मुश्किल हो जायेगा। हम आज ही कूच का हुक्म देते हैं।"

"जो हुकम हजूर। यही बेहतर है।"

× × ×

प्रातः काल लगभग ग्यारह बजे. राजाधिराज नरेन्द्रसिह ने आदेश दिया कि गुलाबसिंह को प्रस्तुत किया जाए। कुछ ही देर में बेड़ियों की खनखनाहट सुनाई पड़ी। पाँव बँधे होने के कारण नायक तेज़ नहीं चल पाता था। फिर भी निशंक रूप से झूमता हुआ वह गजराज की भाँति चला आ रहा था। राजा ने देखा कि वह क़ैदियों के वस्त्र पहने था। उस के हथकड़ियाँ भी पड़ी थीं। गर्दन कुछ झुकी हुई थी किन्तु उस की छाती स्वाभिमान से फ़ूली हुई थी और शरीर वैसा ही बलिष्ट और सुडौल था जैसा उन्होंने पहले देखा था।

पास आ कर गुलाबसिंह ने झुक कर अभिवादन किया।

नरेन्द्र ने कोई उत्तर न दिया और सैनिकों को चले जाने की आज्ञा दी। उन के जाने पर नरेन्द्र क्रुद्ध स्वर में बोले—"क्यों गुलाबसिंह? तुम ने हमारी आज्ञा का फिर उल्लंघन किया ? अब की बार तुम्हें अपने प्राण दे कर प्रायश्चित करना होगा। राजाज्ञा न मानने पर यही दण्ड दिया जाता है।"

गुलाब को आज मरने जीने की चिन्ता न थी। उस ने सारी बात स्पष्ट कहने का निश्चय कर लिया था। वह निर्भीकता से बोला—"मुझे राजाज्ञा स्वीकार है महाराज, किन्तु मेरा दोनों बार कोई दोष नहीं था। पहली बार मुझ पर यह आरोप लगाया कि मैंने विक्रमसिंह का शत्रुता के कारण वध कर दिया। यह बिल्कुल असत्य है। मैंने जो कुछ किया आत्म रक्षा के लिये किया और सेनानायक की हैसियत से किया। उस में मेरा कोई स्वार्थ न था। यदि मैं अपनी रक्षा न करता तो विक्रमसिंह मुझे जीवित छोड़ने वाला न था। फिर भी आप ने प्रधान मंत्री की बातों में आ कर मुझे निर्वासित कर दिया।"

"दूसरी बार के अपराध में तुम क्या कहना चाहते हो ? वह भी कह लो।"

"महाराज ! मैं इस प्रश्न का उत्तर नहीं देना चाहता था किन्तु जब आप पूछते हैं तो कहे देता हूं। आपने अपनी अश्वारोहिणी नायक को निर्वासित किया और वह चला गया किन्तु गुलाबसिंह की निजी व्यक्तित्व नायक के व्यक्तित्व से पृथक् है। उस का एक निजी कर्तव्य था जिसे निभाना प्रत्येक वीर पुरुष अपना धर्म समझता है। मैं आप के राज्य में कोई विद्रोही या लुटेरा बन कर नहीं आया था। बल्कि एक याचक—एक भिखमंगा बन कर आया था। मेरा आना राज्य के शासन में कोई विघ्न नहीं डाल रहा था।"

"किन्तु फिर भी तुम हमारे अपराधी हो गुलाब सिंह" महाराज ने उसी दृढ़ता से कहा—"तुम्हे किस ने आज्ञा दी थी कि तुम राजकन्या के पास जाओ। हमारी आज्ञा के बिना उसे कोई नहीं देख सकता।"

"अपराध क्षमा हो महाराज ! आप फिर भूल रहे हैं मेरा राजकुमारी से कोई सम्बन्ध नहीं।"

"यह कैसे हो सकता है ? तुम मृत्यु के भय से यथार्थ को को छिपाना चाहते हो।"

"नहीं महाराज ! मैं सत्य कहता हूँ" गुलाब ने कहा—"आप की कन्या राजकुमारी की हैसियत से कभी मेरे पास नहीं आई। कमलिनी एक भिखारिन बन कर मुझ से प्रेम की भीख माँगती थी। राजकुमारियों का प्रेम तो राजमहलों की ऊँची अट्टालिकाओं में होता है जहाँ पर झाड़ और फानूस प्रकाश से जगमगाते रहते हैं जहाँ इत्र और फुलेल की गन्ध से शयनागर महकते रहते हैं और जहाँ दस दस दासियाँ उन का शृंगार करती रहती हैं। भयंकर नदी के उस ऊजड़, अंधकारमय और प्राणघातक स्थान में राजकन्याओं का प्रेम नहीं होता महाराज। वह एक मानव और मानवी का शुद्ध प्रेम था जिस में राजा और रंक—ऊंच और नीच का कोई भेद नहीं होता। कमलिनी के संकेत पर मैं प्राणों का मोह छोड़ कर नदी पार करता था। वह बुलाती थी और मैं आता था। इस बार भी उस ने मुझे बुलाया और मैं आया। क्या पुरुष का स्त्री से प्रेम करना कोई अपराध है ? यह कौन से धर्म ग्रन्थ में लिखा है ? आप ही कहिए, क्या आप अपनी रानी से प्रेम नही करते ?"

गुलाब की स्पष्टवादिता से राजाधिराज दंग रह गये। कुछ देर तक वे चुप रहे। उस के बाद गम्भीरता से बोले—"कुछ भी हो

गुलाबसिंह। तुम्हारे व्यक्तिगत कर्म से किसी भी समय राज-वंश की उज्जवल कीर्त्ति में कलंक लग सकता है। हम अपने वंश का अपमान कभी नहीं सह सकते। तुम्हें कारागार में रहना होगा। मंत्रियों से परामर्श के बाद तुम्हारे दंड का आदेश दिया जायेगा।"

गुलाबसिंह जड़वत् खड़ा रहा। सैनिक बुलाये गये और उसे पुनः कारागार पहुँचा दिया गया जहाँ उस के साथी बन्द थे।

× × ×

नदी के उस पार प्रातःकाल तक मदनसिंह ने अपने मित्र की प्रतीक्षा की। उसे निश्चय हो गया कि या तो गुलाब को मार दिया गया या पकड़ लिया गया। वह नदी में डूबने वाला व्यक्ति न था। बाल्यावस्था से ही मदन और गुलाब को कई घंटो तक तैरने का अभ्यास था। अतः नदी उस का कुछ नहीं बिगाड़ सकती थी। अब मदनसिंह को अपनी रक्षा की चिंता हुई। उस ने समझ लिया कि जब नायक पकड़ा गया तो उस के साथियों की भी रातों रात खोज की गई होगी और वे भी बन्दी बना लिए गये होंगे। अतः अपने गाँव को लौटने के बजाय उस ने नगर में जा कर सब हाल मालूम करने की ठानी। वहाँ पहुँचने पर चोरी छिपे उसे सब समाचार विदित हो गये। उस का सिर चकराने लगा। कोई उपाय उस की समझ में नहीं बैठता था। नगर में अनेक व्यक्ति उस के परिचित थे किन्तु उस ने साधारण से साधारण स्थान पर छिपने का निश्चय किया जहाँ किसी को सन्देह न हो सके। एक पानवाली उसे खूब जानती थी। मदनसिंह ने चुपचाप उस के मकान में छिपे रहना ठीक समझा जहाँ घर से बाहर निकले बिना ही सारे समाचार उसे पानवाली द्वारा ज्ञात हो सकें।

मध्यान्ह काल था। भोजन के लिए राजाधिराज अन्तःपुर गये। रानी कुसुम उदास बैठी थी। उन्हें देख कर उस नें मुँह फेर लिया मानो वहाँ कोई आया ही न हो। महाराज स्वयं घूम कर उस के आगे गये और पास आ कर बोले—"क्यों कुसुम ? क्या बात है ? आज तुम हम से क्यों रूठ गई हो ? क्या हमें देर हो गई ?"

रानी ने आँसू भर कर कहा—"आप की लड़की ने सवेरे से खाना पीना छोड़ रखा है। समझाती हूँ तो मानती नहीं। सवेरे से पलँग पर बैठी हुई रो रही है। मेरी तो वह सुनती ही नहीं। न जाने उसे क्या हो गया है।"

नरेन्द्र भी चिंतित हुए। बोले—"अच्छा ! उसे यहाँ बुलवाओ।" आज्ञा पा कर एक दासी बुलाने गई। महाराज ने रानी से कहा—"जाओ, तुम दूसरे कक्ष की ओर चली जाओ।"

रानी चुपचाप मुँह लटका कर चली गई। नरेन्द्र की आँखों में क्रोध और दृढ़ता की भावना थी। अपनी लड़की से उन्होंने गुलाब के बारे में सब कुछ जानते हुए आज तक एक शब्द भी नहीं कहा था किंतु इस समय तो ऐसा लगता था जैसे वे उस की मरम्मत करने के लिए तैयार खड़े थे। बेचैनी से वे इधर उधर टहल रहे थे और बार बार दरवाजे की तरफ देख रहे थे।

राजकुमारी आधी रात से पलँग पर ज्यों की त्यों बैठी थी मानो वह पागल हो गई हो। वेदना की तीव्रता से उस ने बोलना बन्द कर दिया। जब कभी उस की सहेली या उस की माँ उसे समझाने लगती, तो उस के आँसू बहने लगते। कान्ति भी घबरा गई। न जाने मदनसिंह का क्या हुआ। उसे कुछ

पता नहीं था।

गुलाबसिंह के निर्वासन के बाद से ही कमलिनी के व्यवहार में कुछ गम्भीरता आ गई थी। अपने पिता के सामने वह सिर झुका कर केवल शिष्टाचार की बातें करती थी। उस की भोली हँसी और स्पष्ट वार्तालाप बन्द हो गया था। कभी उस के विवाह की चर्चा सुन लेती तो लज्जा और असन्तोष से उस का मुँह लाल हो जाता था। आज तो उस की दशा और भी गम्भीर थी। रोने के कारण आँखें लाल हो गई थीं। केश बिखरे हुए थे और आँचल गीला था।

दासी ने जब महाराज की आज्ञा सुनाई तो सिर से पैर तक राजकुमारी के बिजली दौड़ गई। नारी का इतना अपमान-और वह भी उस के पिता के द्वारा? स्वाभिमानिनी वीरांगना की आँखें अंगारों की तरह चमकने लगीं। एक दम पलंग छोड़ कर खड़ी हो गई मानो घायल सिंहनी के किसी ने पत्थर मार दिया हो। सिरहाने के नीचे से एक लाल मखमल के मियान वाली छुरी निकाली, बाँये हाथ के नीचे उसे बाँध कर शरीर को पुन: ढक लिया और धीरे-धीरे चलती हुई अपने पिता के पास गई। उसका श्वास कुछ तेज चल रहा था। न उस ने कोई अभिवादन किया और न पिता की ओर देखा। महाराज की भी त्यौरियाँ बदल गईं। भौंहें ऊपर चढ़ गईं। होठ फड़कने लगे। उसे इस तरह से घूर कर देखा जैसे खा जायेंगे। कुछ आगे बढ़ कर जोर से बोले—"कमलिनी! हमें तुम से ऐसी आशा नहीं थी।"

युवती सन्न रह गई मानो पैरों के नीचे से ज़मीन खिसक गई हो। महाराज ने फिर कहा-"राज्य के निर्वासित अपराधी को अपने पास बुलाने में तुझे लज्जा नहीं आई।"

कमलिनी चुप थी। वास्तविकता को कैसे छिपाती ? किन्तु चुप रहने से काम नहीं चल सकता था। साहस कर बोली—"पिता जी ! अपराध कर ने से पहले ही उन्हें मैं अपना बना चुकी थी।"

"बेवकूफ कहीं की। हमारी कन्या हो कर उस छोटे आदमी को अपना कहने में तुझे शरम नहीं आती ?"

अब की बार कमलिनी के आग लग गई। बोली—"पिता जी! वे हमारे राज्य के सब से वीर योद्धा हैं। यदि आप को इस में संदेह हो तो आप किसी भी समय इस की परीक्षा ले सकते हैं। ऐसे वीर पुरुष को छोटा आदमी कैसे कहा जा सकता है। मेरा अहोभाग्य है जो मैंने उन्हें अपना पति चुना है।"

"अरी पगली ! यह तू क्या कहती है ? तुझे लज्जा नहीं आती। हमारी इच्छा के बिना तूने यह साहस कैसे किया है ? जानती है गुलाबसिंह को प्राणदण्ड दिया जायेगा।"

"आप अवश्य दण्ड दीजिए पिता जी" कमलिनी ने कहा—"आप शासक हैं। आप को अधिकार है। किन्तु उन के प्राणों के साथ मेरे प्राण भी आप के देखते देखते चले जायेंगे। क्षत्रिय कन्या केवल एक पुरुष को पति चुनती है और उस के लिये वह मर मिटना जानती है" कहते कहते उस का चेहरा सुर्ख हो गया और आवेश में उस ने फौरन अपनी छुरी निकाल ली।

लपक कर पिता ने उस का हाथ पकड़ लिया और बोले—"बेटी कमलिनी! बस करो।" आँखों में आँखों में आसू आ गए। सन्तान का मोह और हृदय की ग्लानि। लड़खड़ाते हुए करुण स्वर में बोले—"मेरी बच्ची। बुढ़ापे में तूने मेरी नाक नीची कर दी। हम लोगों से क्या कहेंगे अपराधी को कैसे मुक्त करेंगे ? जनता क्या सोचेगी ? अच्छा जाओ, हम उसे प्राणदण्ड नहीं

देंगे।"

राजाधिराज ने लाल छुरी कमलिनी से माँग कर अपने हाथ में ले ली और उस के सिर पर हाथ रख कहा—"बेटी, चिन्ता न करो। भगवान् सब अच्छा करेगा।"

कमलिनी के जाते ही रानी दौड़ी हुई अपने पति के पास आई और घबरा कर बोली—"महाराज ! आप इतने कठोर क्यों हो गए ? मेरी फूल सी बच्ची को क्या इस तरह डाँटना था ? कहीं उस का दिल न टूट जाये। आप नारी-हृदय की कोमलता को बिल्कुल भूल जाते हैं। ये बातें क्या उस के सामने कहने की थीं। मैं तो कहती हूँ गुलाबसिंह को छोड़ दो। ऐसी अनहोनी बात क्या हो रही है ? आखिर प्रेम तो सभी करते हैं। मेरी लड़की ने कौन सा पाप किया है ?"

नरेन्द्र कुछ नहीं बोले। थोड़ा सा पानी पिया और क्षुब्ध हो कर जल्दी ही बाहर चले आये।

★

बीसवां परिच्छेद

दूसरे दिन नगर में हाहाकार मचा हुआ था। राज्य की अश्वरोहिणी, पैदल, हाथी, ऊँट और रथ—सब प्रकार की सेनायें रणघोष करती हुई दुर्ग के समीप एकत्र हो रही थीं।

"अरी चमेली ! आज क्या अनर्थ होने वाला है ? किस ने आक्रमण कर दिया ? कहीं अपनी जान भी बच सकेगी या नहीं ?"

"सरकार ! नवाब फैय्याज़ खाँ की फौज चढ़ आई है। नगर के बाहर मैदान में लड़ाई होने वाली है। आप तो ऐसे बैठे हैं जैसे कुछ जानते ही नहीं। तलवार बाँध कर लड़ने जाइये। अपनी सेना को मज़बूत बनाइये। आप यहीं घुसे रहेंगे या कभी बाहर भी निकलेंगे ?"

पानवाली के कटाक्ष से मदनसिंह बड़ा मर्माहित हुआ। तूर्य का शब्द सुन कर उस का जोश उमड़ रहा था और भुजायें फड़क रही थीं। किन्तु उसे तो दुर्ग में जा कर और ही काम करना बात बनाता हुआ हँस कर बोला— "हाय चमेली ! लड़ते लड़ते हाथ पाँव थक गए। अब तो हिम्मत नहीं होती।"

"सरकार ! चूड़ियाँ मँगवा दूँ। मेरी साड़ी ओढ़ कर दुकान पर बैठ जाइये। मेरी मदद करिए।"

"अच्छा, यह तो बता कि युद्ध के बाद भगवान् न करे लेकिन स्त्रियों की क्या हालत होगी ?"

"होगी क्या ? वे सब दुर्ग में जा रही हैं। सेना के जाते ही द्वार बन्द हो जाएगा और यदि हमारी सेना नहीं लौटी तो स्त्रियाँ जल मरेंगी। महल की छत पर बारूद बिछा दी गई है। यदि मुसलमान दुर्ग की ओर आये तो उस से पहले ही वे सब भस्म हो जायेंगी। यहाँ ऐसी ही रीत है। आप को भी तो पता है। यहाँ बहाना बना के बैठे रहिये। आप जैसे मर्द दुनियाँ में कहीं कहीं मिलते हैं।"

"क्या बताऊँ चमेली" मदन ने कहा—"बात कुछ ऐसी ही है कि मैं नहीं जा सकूँगा वर्ना आज तेरे ताने क्यों सुनता ? अब तक कभी का चला गया होता। अच्छा यह तो बता, क्या तू भी दुर्ग में जाएगी ?"

"नहीं सरकार। मुझे क्या पड़ी है जो जल मरूँ। मेरा कौन पति है। मुझे तो पान खिलाने से मतलब है।"

"अच्छा देख" मदन ने धीरे से कहा—"आज तुझे एक काम करना होगा। तेरे कपड़े मुझे सौंप दे और जब कुछ स्त्रियाँ इधर से निकलें तो मेरी ओर इशारा कर देना। मैं चुपके से उन में जा मिलूँगा और दुर्ग में चला जाऊँगा।"

"वाह सरकार! क्या कहने हैं। आप तो कमाल करते हैं। आदमी तो मैंने बहुत से देखे हैं लेकिन आप जैसा बहादुर आज तक नहीं देखा। आप से तो मैं ही अच्छी हूँ।"

"चल चल! बातें न बना" मदनसिंह ने एक अशर्फी उस के हाथ में थमा दी। उस के बाद स्त्री वेष धारण कर के मदन ने घूँघट निकाल लिया और बोला—"क्यों चमेली, कैसा लगता हूँ ?"

"बहुत सुन्दर सरकार ! सिन्दूर की ही कसर है ।"

उस ने हँस कर बगल में कटार छिपाई और स्त्रियों के एक झुंड में शामिल हो कर दुर्ग के भीतर चला गया।

प्रधान मंत्री और प्रधान सेनापति शस्त्रों से सुसज्जित हो कर अन्तःपुर से महाराज के आगमन की प्रतीक्षा में थे। रानी ने तलवार सौंप कर राजाधिराज से कहा—"हमारी रक्षा आप के हाथ में है स्वामी। ईश्वर करे आप शीघ्र ही विजय पताका ले कर पधारें। हम आप की आरती उतारेंगी और देव वश यदि ऐसा न हो सका तो आग में कूद कर अपने प्राण दे देंगी।"

"युद्ध में मर मिटना क्षत्रिय का धर्म है रानी" महाराज ने दृढ़ता से कहा—"ईश्वर ने चाहा तो जीत हमारी ही होगी। यदि ऐसा न हुआ तो हमारी लाश ही यहाँ आयेगी। तुम स्त्रियों का ध्यान रखना। शत्रुओं के आने से पहले सब भस्म हो जायें। हमें कमलिनी की अधिक चिन्ता है। तुम उसे अपने साथ रखना।"

"महाराज निश्चिन्त रहें। प्राण देने के लिए क्षत्राणियों को किसी शिक्षा की आवश्यकता नहीं पड़ती। कमलिनी अपना कर्त्तव्य स्वय समझती है। आप निश्चिन्त हो कर युद्ध में पधारिये और शत्रुओं का संहार करिये।"

विदा ले कर नरेन्द्र बाहर आ गये। प्रधान मंत्री ने प्रणाम कर कहा—"अन्नदाता जी ! आप की आज्ञानुसार राजकुमार महेन्द्र को चालीस अश्वारोहियों के साथ उन के ननिहाल भेज दिया गया है और उन के मामा के पास यह संदेश भेज दिया गया है कि देव वश यदि हम न रहें तो कुमार का ध्यान रखें

और अपनी सेना देकर राज्य को पुनः जीतने में उन की पूरी सहायता करें।"

"बिल्कुल ठीक है मंत्री जी। अब मैं निश्चिन्त हो गया।" तब उन्होंने हिम्मतसिंह की ओर संकेत कर कहा—"सेनापति जी। दुर्ग में केवल पचास सैनिक छोड़ दीजिए। शेष सारी सेना युद्ध में चलेगी। ये सैनिक केवल इस बात का ध्यान रखेंगे कि स्त्रियाँ जीवित न रहें और मुसलमान उन्हें नहीं देख सकें। इस के बाद ये लोग भी शत्रु से युद्ध करेंगे।"

"जो आज्ञा महाराज" हिम्मतसिंह ने कहा।

"एक बात और है सेनापति जी" महाराज बोले—"हमारी इच्छा है कि गुलाबसिंह को भी साथ ले लिया जाए।"

प्रधान मंत्री बीच में बोल पड़े—"पृथ्वीनाथ! वह तो राज्य का अपराधी है। उसे सहसा मुक्त करना नियम के विरुद्ध होगा। दूसरी बात और है महाराज जो आप की आज्ञा से मैं सेनापति जी के समक्ष ही कह देना चाहता हूँ।"

"अच्छा कहिए" राजाधिराज ने कहा।

"अन्नदाता जी। गुलाबसिंह और राजकन्या का प्रेम आप से छिपा नहीं है। यदि आप ने उसे मुक्त कर दिया और युद्ध में ले गए तो इस बात का निश्चय समझिए कि गुलाबसिंह वहाँ से घोड़े के एड़ लगा कर सीधा दुर्ग में आ जाएगा और राजकन्या को अपने साथ ले कर गुप्तद्वार से तीर की तरह बाहर निकल जायेगा। जब कोई वीर युवक प्रेम में फँस जाता है तो वह अंधा हो जाता है। उसे और कुछ नहीं सूझता। नायक गुलाबसिंह को रोकने वाला इस दुर्ग में एक भी व्यक्ति नहीं है। जो कोई सामने आयेगा, उसे वह काट कर अलग कर देगा।"

"बात तो ठीक है मंत्री जी" महाराज बोले—"गुलाबसिंह

के लिये यह असंभव नहीं है। यदि वह ऐसा कर बैठा तो हमरे वंश में कलंक लग जायेगा। जहाँ लोग हमारे बाप दादाओं का नाम गर्व के साथ लेंगे वहाँ यह भी कहेंगे कि युद्ध में सब लोग गये और स्त्रियों जल मरी लेकिन नरेन्द्रसिंह की कन्या एक सिपाही के साथ दुर्ग से भाग गई। नहीं मंत्री जी, हम ऐसा कभी नहीं होने देंगे। गुलाबसिंह को यहीं रहने दिया जाये।"

बैरीसाल खुश थे लेकिन प्रधान सेनापति को बैरीसाल की यह मंत्रणा पसन्द नहीं आई। वे बोले—" महाराज ! गुलाब सिंह की इस समय बहुत जरूरत है। यदि वह गरीब वहीं बन्द रहा तो मुसलमान उसे कुत्ते की मौत मार डालेंगे और उस की बोटी-बोटी अलग कर के चील कव्वों के आगे फेंक देंगे। वह उन का भी तो अपराधी है।"

"नहीं सेनापति जी ! हम नहीं चाहते कि गुलाबसिंह कुत्ते की मौत मरे। हमारे हृदय में उस की वीरता के लिए स्थान है। इसलिये कारागार के अध्यक्ष को हम यह आदेश देते हैं कि यदि हम सब युद्ध में काम आयें और स्त्रियाँ भस्म हो जायें तो गुलाबसिंह और उस के साथियों को मुक्त कर दिया जाये और उन्हें हथियार सौंप दिये जायें। हमें विश्वास है कि ऐसी स्थिति पैदा होने पर गुलाबसिंह अंतिम दम तक युद्ध करेगा और यदि वह दुर्ग छोड़ कर चला भी गया तो यहाँ से निकल कर सीधा हमारे पुत्र के पास जायेगा और दुर्ग जीतने में उस की पूरी सहायता करेगा। बस यहीं हमारा अंतिम निश्चय है। क्यों मंत्री जी! ठीक है? देखिये हम ने आप की बात भी मान ली और सेनापति जी की बात भी मान ली। अच्छा अब अधिक समय नष्ट नहीं किया जाये और सेना को प्रयाण का आदेश दिया जाये।"

"जो आज्ञा महाराज" सेनापति ने प्रणाम किया और कुछ देर बाद शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित सेना अँधियारे बादल की भाँति युद्धस्थल की ओर चली।

"नानी ? नानी ?" एक स्त्री ने पुकारा। चम्पा को देख कर उस ने अपना घूँघट उठाया और कहा -"मैं आ गया हूँ।"

पुरुष की आकृति देख कर वृद्धा एकदम चौंक पड़ी। उसे घूरने के बाद बोली— "अरे मदन! शाबास खूब मिले। मैं तो डर गई थी कि यह कौन आ गया! बड़े मौक़े से आये।"

"हाँ नानी। अब देर करने का अवसर नहीं है। समस्त सेना युद्धस्थल पहुँच गई होगी। दुर्ग में तो गिनती के सैनिक हैं। गुलाब को छुड़ाने का यही स्वर्ण अवसर है।"

चम्पा ने कहा—"राजकुमारी जी तो उन्हें मुक्त कराने का जी तोड़ प्रयत्न कर रही है किंतु कारागार का वह मूर्ख अध्यक्ष टस से मस नहीं होता है। हम ने उसे काफी लालच दिया लेकिन एक नहीं चली। समझ में नहीं आता कि क्या करें। हम स्त्रियाँ हैं मदन, तुम्हारे बिना हमारा काम नहीं चल सकता।"

"देखो नानी, प्रयत्न करना हमारे हाथ है और सफलता भगवान के हाथ है। सब से पहले तो मुझे जल्दी से राजकुमारी जी के पास ले चलो। आज तक मैंने उन के दर्शन नहीं किये। फिर जैसा वे आदेश देंगी वैसा ही करूँगा।"

दोनों महल के अन्तरिक्ष में पहुँचे। कमलिनी और कान्ति पास पास बैठी बातें कर रही थीं। दोनों के मुख म्लान और कुंठित थे। न अधरो पर मुस्कान थी और न बालों में तेल। मरणोन्मुख रोगी के चेहरे पर जैसी गम्भीर उदासी छा जाती है वैसे ही वे हताश और नत मस्तक बैठी थीं। राजकुमारी ने लम्बी साँस खींच कर कहा—"आज अपने जीवन का अंतिम

आ गया दीखता है कान्ति ।"

"ऐसा न कहो राजकुमारी जी। भगवान् ने चाहा तो महाराज की ही विजय होगी। मुझे तो विश्वास है कि महाराज जब विजयी हो कर पधारेंगे तो उस की खुशी में सारे क़ैदियों को मुक्त कर दिया जायेगा।"

सहेली के ढाढस बँधाने का कमलिनी पर कोई असर नहीं हुआ। उस ने निराश हो कर फिर कहा—"शत्रुओं की सेना बहुत अधिक है और हमारे जीवित रहने की कोई संभावना नहीं है। सब से अधिक दुःख यही है कि मरने से पहले मैं उन से नहीं मिल सकूँगी । कारागार में उन का भी केवल भगवान ही रक्षक है।"

इतने में चम्पा ने एक हृष्ट पुष्ट स्त्री उन के सामने ला कर खड़ी की और उस का नव वधू की तरह स्वागत करते हुए बड़ी प्रसन्नता से घूँघट उठाया।

दोनों युवतियाँ चौंक कर खड़ी हो गईं। मदन ने सिर झुका कर अभिवादन किया। चम्पा बोली—ये हैं कुमार के प्रिय मित्र मदनसिंह जी।"

कान्ति का हृदय प्रसन्नता से बाँसों उछल रहा था। राजकुमारी के अधरों पर भी मुस्कराहट दौड़ गई।

"राजकुमारी जी, मैं आप की सेवा के लिए प्रस्तुत हुआ हूँ" युवक ने दोनों हाथ जोड़ कर कहा।

"धन्य हो। इस वेष में" कमलिनी ने हँस कर कहा।

मदन बोला—"यह तो यहाँ आने की तैयारी थी। चम्पा नानी, मेरे लिए जल्दी से दूसरे वस्त्रों का प्रबन्ध करो। मुझे कारागार के अध्यक्ष से मिलना है।" तब उस ने राजकुमारी की ओर मुंह फेर कर कहा—"आप निश्चिंत रहिये राजकुमारी

जी ! अपने मित्र के लिये आज मैं अपने प्राण दे दूँगा । मैं देखता हूँ कि वे कैसे मुक्त नहीं होते ।"

"आप की निष्टा पर हमें गौरव है मदनसिंह जी" राजकुमारी बोली—"जितने धन की आवश्यकता हो यहाँ से ले जाइये ।"

मदनसिंह ने कुछ जवाहिरात और अशर्फियाँ राजकुमारी से लीं । उस के बाद चम्पा के प्रबन्ध द्वारा उसे एक तलवार, एक ढाल और पुरुषों के वस्त्र दिए गये ।

काराध्यक्ष के पास जा कर उस ने एकान्त में कहा—"मैं महारानी कुसुम कुमारी का भेजा हुआ राजभृत्य हूँ । महारानी जी ने आज्ञा दी है कि गुलाबसिंह जी और उन के साथियों को तुरन्त मुक्त कर दिया जाए ।"

अध्यक्ष ने कहा-"क्षमा करिये । मुझे महाराज की स्पष्ट आज्ञा मिली है कि उन के अतिरिक्त अन्य किसी व्यक्ति की आज्ञा से गुलाबसिंह जी को नहीं छोड़ा जाये ।"

मदनसिंह अकड़ कर खड़ा हो गया । बाँये हाथ से तलवार की मूठ पकड़ता हुआ बोला—"आप कैसी बातें करते हैं अध्यक्ष जी । यदि महाराज वीर गति को प्राप्त हो गए तो गुलाबसिंह जी क्या अन्दर ही सड़ कर मर जायेंगे ? ये सब बातें सोचने के बाद ही मुझे यह आज्ञा दी गई है ।"

अध्यक्ष अपनी बात पर दृढ़ रहा । बोला—"मुझे खेद है । मैं विवश हूँ । गुलाबसिंह जी को छोड़ना केवक एक स्थिति में संभव हो सकता है ।"

"वह क्या ?"

"जब शत्रु सेनायें दुर्ग की ओर आ रही हों, राजमहिलायें भस्म हो चुकी हों और दुर्ग पर यवनों का अधिकार होने वाला

हो। उस समय मैं सब को मुक्त कर के उन्हें हथियार दे दूंगा और स्वयं भी मातृ-भूमि के लिए लड़ते लड़ते अपने प्राण दे दूंगा।"

यह सुन कर मदनसिंह सोचने लगा कि युद्ध का परिणाम भी अधिक दूर नहीं है। चाहे हमारी सेना जीते या हारे, गुलाबसिंह की दोनों स्थिति में आफत है। उसे एक तरकीब सूझी। वह बोला—"दुर्ग की रक्षा का भार किसे सौंपा गया है?"

अध्यक्ष ने कहा—"फतहसिंह जी को। वे पचास सैनिकों के साथ दुर्ग में मौजूद हैं।"

मदन ने कहा—"अच्छा पहले मैं उन से परामर्श करता हूँ। उस के बाद आप के पास फिर आऊँगा। मुझे महारानी जी की आज्ञा का पालन करना है।"

अध्यक्ष ने कहा—"जैसी आप की इच्छा। मैं तो महाराज के आदेश पर अंतिम क्षण तक दृढ़ रहूँगा। यदि मैं अपने स्वामी की आज्ञा न मानूं तो मेरे जैसा विश्वासघाती और कौन होगा।"

मदन वहाँ से चला गया। उस ने सोचा कि अध्यक्ष तो काबू में न आया। अब दुर्गनायक को अपनी ओर तोड़ा जाय वर्ना काम नहीं बन सकता।

फतहसिंह से मदनसिंह का पहले से ही परिचय था और उसे भी पता था कि मदन गुलाबका पक्का मित्र है। मदनसिंह ने साम, दाम, दण्ड, भेद सब—अजमाने को सोच रक्खी थी। मिलते ही उस ने एक बहुमूल्य हीरा निकाला। उसे अपनी दाहिनी हथेली पर रखा और उस के नीचे बायीं हथेली रखी। जिस प्रकार किसी बड़े आदमी को भेंट दी जाती है उसी प्रकार उस ने सिर झुका कर हथेली आगे बढ़ाई और अदब से बोला—"राजकुमारी

जी ने आप के पास यह उपहार भेजा है फतहसिंह जी। आप इस समय दुर्गनायक हैं। हमारी और हमारे दुर्ग की रक्षा आप के हाथ में है।"

हीरे की चमक और राजकुमारी के नाम से फतहसिंह खुशी के मारे उछल पड़ा। हीरे को अपनी जेब के हवाले किया। मुंह में पानी भर आया। बहुत कृतज्ञ हो कर उस ने कहा—"मुझ गरीब पर राजकुमारी जी की इतनी कृपा। कहाँ वे महलों में रहने वाली राजकन्या और कहाँ मैं उन का तुच्छ सेवक। कहिए उन की क्या आज्ञा है। उन के आदेश का पालन करने के लिए मैं अपने प्राण तक दे सकता हूँ मदनसिंह जी। कहिए क्या आज्ञा है?"

मदन ने सोचा—"चलो एक चिड़िया तो फँसी।" उस की पीठ थपथपाता हुआ बोला—"शाबास फतहसिंह जी। आप जैसे वीर पुरुष ही दुर्ग की रक्षा कर सकते हैं। आप हमारी जन्मभूमि के गौरव हैं। यह समय हमारे लिए बहुत संकट पूर्ण है। दुर्ग को बचाने के लिए हमें बहुत चतुराई से काम लेना है।"

"हाँ हाँ, अवश्य।"

"देखिये आप जानते ही हैं कि अश्वारोहिणी के वीर नायक गुलाबसिंह जी अभी तक कारागार में बन्द पड़े हुए हैं।"

"जी हाँ, किन्तु वे तो राज्य के अपराधी हैं।"

"अरे अपराधी गया चूल्हे में। युद्ध के समय तो सभी अपराधी हैं। उन का मुक्त होना आवश्यक है वर्ना हम सब मारे जायेंगे। इसीलिए राजकुमारी जी ने आप के पास यह संदेश भेजा है कि गुलाबसिंह जी को मुक्त कराने में आप हमारी सहायता करें। इस के लिए आप को और मुझे दोनों

को पुरस्कार मिलेगा, हमारा ओहदा भी बढ़ाया जायेगा और सच्ची बात तो यह है भाई कि इस अवसर पर आप के सहयोग का आभार राजकुमारी जी जीवन भर नहीं भूल सकतीं।"

"मुझे स्वीकार है। मैं अपने सैनिकों सहित आप की सहायता करने के लिए तैयार हूँ।"

"शाबास फतहसिंह जी। आप धन्य हैं। इस समय आप जैसे वीर पुरुषों की आवश्यकता है किन्तु कारागार की ओर चलने से पहले दुर्ग के ऊपर चढ़ कर युद्धस्थल को देखेंगे। हमें देखना है कि क्या परिणाम निकलता है। उस के बाद हमें तुरन्त अपना कर्त्तव्य करना होगा।"

★

इक्कीसवाँ परिच्छेद

रणभेरी ज़ोर से बज रही थी। 'मारो मारो' की आवाज़ से आसमान गूंज रहा था। तोपों की गर्जना, घोड़ों की हिनहिनाहट, तलवारों की झनकार और वीरों की ललकार से कोहराम मचा हुआ था। हाथी, ऊँट, पैदल और घोड़ों के इधर उधर दौड़ने से शोर गुल हो रहा था। ढोल और नगाड़ों की आवाज़ से बढ़ कर तोपों का गगनभेदी स्वर था जिस के साथ धुएँ के बादल आकाश में उठ रहे थे। मरने जीने की आस छोड़ कर दोनों पक्ष एक दूसरे से जूझ रहे थे। दुर्भाग्य से हवा का तेज़ बहाव गागरोन की सेना की ओर हो गया। यही विनाश का सूचक था। तोपों का सारा धुँआ इधर आने लगा। चारों ओर धुंआधार हो गया। शत्रु और मित्र की पहिचान कठिन हो गई। प्राणों का संघर्ष था। युद्ध की भीषणता के कारण मारकाट के अतिरिक्त और कुछ नहीं सूझता था। प्रधान मंत्री बैरीसाल लड़ते लड़ते काम आये। राजाधिराज की वीरता अद्भुत थी। उन का पराक्रम शत्रुओं के छक्के छुड़ा देता था।

दूसरी ओर फैय्याज़ खाँ के गोलन्दाज़ बहुत सधे हुए थे। सैनिको के झुण्ड उन के गोलों से साफ हो जाते थे। घड़ियाल

का सा मुँह फाड़े हुए तोपें आग उगल रही थीं। देखते ही देखते दुश्मनों ने महाराज का हाथी घेर लिया। नरेन्द्र तेज़ी से बाण वर्षा करने लगे। किन्तु शत्रु एक के बाद एक बढ़ते चले आ रहे थे। भालों के प्रहार से अधिक घायल होने पर हाथी घबरा कर बैठ गया। राजाधिराज तलवार खींच कर हाथी से कूद पड़े और शत्रुओं से भिड़ गए। इतने ही में सैनिकों को काटते हुए प्रधान सेनापति तेज़ी से झपटे और महाराज के सामने आ कर युद्ध करने लगे। घोर संग्राम छिड़ गया। लड़ते-लड़ते सेनापति अपने स्वामी की रक्षा में काम आये। शत्रुओ की चढ़ बनी और उन्होंने दूने साहस के साथ आक्रमण कर दिया। नरेंद्र चारों ओर से घिरे हुए थे। दोनों दलों की सारी शक्तियाँ उसी स्थान पर जुटी हुई थीं। किन्तु फैय्याज़ खाँ कुछ दूर पर सुरक्षित था और उस ने अपनी फौज को ललकार कहा—"बहादर सिपाहियो। दुश्मन की हार अनकरीब है। अपनी पूरी ताक़त लगा दो। दुश्मन बचने नहीं पाये।"

प्राणों का मोह छोड़ कर दोनों सेनायें भयंकर मार काट मचाने लगी। राजाधिराज का लहू से लथपथ शरीर तलवारों की धारो से चिपटने लगा और शत्रुओं का संहार करते हुए वे सदा के लिये पृथ्वी पर लेट गये। गागरोन की सेना में हाहाकार मच गया और वह पूर्ण रूप से हताश हो गई। मुसलमानों की बढ़ती हुई फौज के आगे उन की एक न चली। वीर कट-कट कर गिर गये। शत्रु सेना विजाय घोष करती हुई दुर्ग की ओर अग्रसर हुई। नवाब खुशी के मारे फूला न समाता था। राजकुमारी को पाने की इच्छा उस में प्रबल होती जा रही थी।

शत्रुओं का झंडा आगे बढ़ता देख कर मदनसिंह तेज़ी से नीचे उतरा और अन्तःपुर की ओर दौड़ा। पीछे-पीछे फतहसिंह

भी दौड़ रहा था। वहाँ जाकर उस ने चम्पा के द्वारा रानी से भेंट करने की इच्छा प्रकट की और आज्ञा मिलते ही धड़धड़ाता हुआ सामने आ खड़ा हुआ। रानी कुसुम केसरिया वस्त्र पहने बैठी थी। उस की सिहनी की सी दृष्टि से तेज टपक रहा था। कमलिनी और कान्ति भी उस के पास थी। सब स्त्रियाँ दुर्ग की छत पर जाने के लिये शृंगार किये बैठी थीं।

मदनसिंह ने विनम्रता से कहा—"मेरी हाथ जोड़ कर प्रार्थना है महारानी जी! भगवान् के लिये अभी बारूद में पाँव न रखिये। गुलाबसिंह जी अभी जीवित हैं। उन की वीरता पर विश्वास रखिये। मैं फतहसिंह जी की सहायता से उन्हें अभी मुक्त करता हूँ।"

किन्तु रानी अपने निश्चय पर डटी रही। उस ने गम्भीरता से कहा--"वे चाहे मुक्त हों या न हों मदनसिंह जी। अब हमारे जीने से क्या लाभ है? महाराज स्वर्ग सिधार गये और मैं अभी तक जीवित हूँ। दुर्ग की अन्य स्त्रियाँ भी उन के पतियों के न रहने से आग में कूदने को तैयार हैं। अब हमें किस के लिये जीना है।"

रानी की आँखों में आग भरी हुई थी। मदनसिंह नीचा सिर किये खड़ा रहा। उसे डर था कि कहीं बना बनाया खेल बिगड़ न जाए। कमलिनी और कान्ति के प्राणों का प्रश्न था। वे दोनों भी चुपचाप खड़ी थीं। मदन ने प्रण किया कि चाहे प्राण ही क्यों न देने पड़ें, उन की रक्षा अवश्य करनी है।

उस ने निर्भीकता से कहा--"क्षमा करिये महारानी जी। आप को विदित है कि गुलाबसिंह और राजकुमारी जी दोनों एक दूसरे को वर चुके हैं। उन की अँगूठी से आप को पता चल सकता है कि उन का विवाह पहले ही हो चुका है। पति के जीवित

रहते पत्नी सती हो जाये, यह एक घोर अनर्थ है। यह पति की वीरता का अपमान है और कोई वीर पत्नी ऐसा नहीं करेगी। यदि आप चाहें तो शरीर त्याग सकती हैं। किन्तु राजकुमारी जी नहीं जा सकेंगी। गुलाबसिंह के जीवित रहते हम यह काम नहीं होने देंगे।"

रानी ने भौंहें तान कर कहा—"यह कैसे हो सकता है? कमलिनी के लिए ही सारा युद्ध हुआ। सारी सेना नष्ट हो गई और अब तुम कहते हो कि वही न जले–यह कैसे हो सकता है? क्यों फतहसिंह, तुम भी इन के साथ हो लिए? क्या इसी विश्वास पर महाराज ने तुम्हें दुर्ग नायक बनाया था? महाराज की आज्ञा है कि कमलिनी के प्राण नहीं बचने पायें। यदि यह शत्रुओं हाथ लग गई तो क्या हालत होगी? हमारे उज्जवल वंश में सदा के लिए कलंक लग जाएगा।"

मदनसिंह ने कहा—"यह असंभव है रानी जी। क्या आप को अपनी वीर पुत्री पर इतना भी विश्वास नहीं है। यदि ऐसा ही अवसर आ गया तो ये स्वयं अपना कर्त्तव्य पूरा करेंगी। यदि ऐसा न हुआ तो मेरे ये हाथ नष्ट होने से पहले राजकुमारी का जीवन समाप्त कर के ही नष्ट होंगे। मैं वचन देता हूँ। क्या आप को राजपूत की बात पर इतना भी भरोसा नहीं है?"

"अच्छा तो मदनसिंह" रानी ने सहसा प्रसन्न हो कर कहा– "मैं तुम्हारा विश्वास करती हूँ और तुम्हारे द्वारा मैं अपनी लड़की गुलाबसिंह को सौंपती हूँ। तुम क्षत्रिय हो। यदि तुम ने अपने वचन को नहीं निभाया तो मेरी आत्मा तुम्हें सदैव श्राप देती रहेगी।"

इस के बाद उस ने कमलिनी को गले लगाया और अपनी कटार उसे दे कर बोली—"बेटी, यह कटार तुझे सौंपती हूँ।

यदि संकट आ पड़े तो शत्रुओं का हाथ लगने से पहले इसे अपनी छाती में भोंक लेना। अपने घर की लाज तेरे हाथ में है।"

दोनों हाथ में कटार झेल कर राजकुमारी ने उसे अपनी छाती से लगाया और कहा—"माँ, मैं पिता जी की शपथ ले कर कहती हूँ कि यदि मैंने क्षत्रिय वंश में जन्म लिया है तो अवसर आने पर इसी कटार से अपनी छाती चीर डालूँगी।"

"बस बेटी" रानी ने अपना हाथ उस के कन्धे पर रख कर कहा—"तेरा सुहाग अमर रहे। अच्छा, मुझे देर हो रही है। अच्छी तरह रहना।"

रानी ने कमलिनी और कान्ति को गले लगाया। दोनों के आँसू टपक रहे थे। जाते जाते चम्पा ने कहा—"अच्छा राजकुमारी जी। भगवान आप को सुखी रखे। कान्ति बेटी, सुखी रहना।" वृद्धा की ज़बान लड़खड़ाने लगी। वह रानी के साथ चलने लगी। विदा से पहले रानी ने अपना हार उतार कर लड़की को पहनाया और अपना भुजबंध खोल कर कान्ति को दिया। फिर वह छम छम करती सीढ़ियों पर चढ़ गई और छत पर पहुँची। स्त्रियों ने खड़े हो कर रानी का अभिवादन किया और वह निश्चित स्थान पर जा कर बैठ गई।

मंगल-गीत प्रारम्भ हुआ मानो उन के विवाह की वेला समीप आ रही थी। केसरिया वस्त्र पहने उन वीरागनाओं का जोश अपरिमित था। मुक्त कण्ठ और अदम्य उत्साह से गाये हुए गीत के स्वर आकाश में गूँजने लगे। मदनसिंह ने पहली बार अनुभव किया कि नारी के कोमल कण्ठ में भी वीर रस उत्पन्न करने की अद्भुत क्षमता होती है।

राजकुमारी की आँखें महल की छत से मिली हुई थीं। मदन, कान्ति और फतहसिंह भी टकटकी लगा कर देख रहे थे।

गीत गाते गाते रानी ने चम्पा की ओर संकेत किया। बारूद में आग लगाते ही, सहसा एक भीषण ज्वाला उठी जिस का प्रकाश चारों ओर फैल गया जैसे कोई जलता हुआ नक्षत्र पृथ्वी पर आ गिरा हो। गीत रुक गया। राजकुमारी ने अपना मुँह हाथों से ढाँप लिया। स्त्रियों के स्थान पर अब वहाँ केवल गर्म राख का ढेर था। मदन और फतहसिंह स्तब्ध हो कर खड़े थे।

कुछ देर में मदन ने कहा—"ईश्वर की यही इच्छा थी। हमारा सर्वनाश हो गया। हमें अब जल्दी से कारागार की ओर चलना चाहिए। अब तो बन्दियों को छुड़ाने में कोई कठिनाई नहीं होगी। किन्तु देखो फतहसिंह जी। उस मूर्ख अध्यक्ष के आगे यह न कहना कि राजकुमारी जी जीवित हैं वर्ना वह कभी द्वार नहीं खोलेगा और उस से लड़ाई लड़नी पड़ेगी।"

"अच्छा ठीक है।"

जब वे दोनों जाने लगे, तो राजकुमारी ने कहा—"ठहरो मदनसिंह। ज़रा ठहरो।"

मदन ने देखा कि राजकुमारी की आँखोंमें खून उतर रहा था। भोली हरिणी की दृष्टि अब सिंहनी का तीव्र अवलोकन बन गई थी। स्त्रियों का भस्मीभूत होना देख कर उसे शत्रुओं पर बहुत क्रोध आ रहा था। उस ने साक्षात् चण्डी का रूप धारण कर लिया।

राजकुमारी ने कहा—"आततताइयों ने मेरे बाप को मार दिया। सारी सेना को नष्ट कर दिया। स्त्रियाँ जल कर राख हो गईं। यह सब किस लिए? मेरे लिए। और मैं खड़ी खड़ी यह अत्याचार देखती रहूँ? धिक्कार है ऐसे जीवन पर। ठहरो मदनसिंह। युद्ध के लिए मैं भी चलती हूँ।"

मदनसिंह घबराया। उस ने समझा कि यह तो सारा काम ही चौपट हुआ। यदि राजकुमारी साथ चली तो गुलाबसिंह का कारागार से निकलना कठिन है और यदि वह निकल भी आया तो राजकुमारी को देख कर शत्रु सेना का जोश चौगुना बढ़ जाएगा। उसे जीवित पकड़ने के लिए वे अपनी जान लड़ा देंगे। उस ने दृढ़ता से कहा—"नहीं राजकुमारी जी। आप नहीं चल सकतीं। रानी जी ने आप की रक्षा का भार मुझे सौंपा है।"

लड़की अपनी ज़िद पर आ गई। बोली—"यह नहीं हो सकता। मैं चल कर ही रहूँगी। तुम मुझे नहीं रोक सकते मदनसिंह। मैं राजकन्या हूँ। इस दुर्ग पर इस समय मेरा अधिकार है। तुम्हें हमारी आज्ञा माननी ही पड़ेगी। युद्ध में मैं भी चलूँगी।"

मदन बोला—"क्षमा करिए राजकुमारी जी। मैं विवश हूँ। आप की माँ ने आप की रक्षा का भार मुझे सौंपा है। उन की यही आज्ञा थी। इस समय मैं आप का नहीं, आप मेरी आश्रित हैं। आप युद्ध में नहीं जा सकेंगी। हाँ, मैं थोड़ी सी रियायत कर सकता हूँ। तोरण द्वार के ऊपर जो बुर्ज है बस वहीं तक आप जा सकती हैं। इस दुर्ग की पहली दीवार से आगे न जाइये। आप की बाण-विद्या की मैंने बहुत प्रशंसा सुनी है। हम भी देखें, आप कैसा निशाना लगाती हैं। बस वहीं पर खड़े खड़े अपने तीर चलाइये। देखिये राजकुमारी जी, हम ने आप की बात मान ली। अब आप खुश हो जाइये और हमारी बात मान लीजिये। आप की हवस भी पूरी हो जायेगी और हम अपना कर्त्तव्य भी कर सकेंगे। क्यों कान्ति, तुम्हारी क्या राय है?"

कान्ति भी हाँ में हाँ मिलाती हुए बोली—"ठीक तो है राजकुमारी जी। इस समय इन की बात मानने में ही हमारी भलाई है। आप को क्या पता है कि आप की सुन्दरता देख कर लोगों की क्या हालत होगी। आप महलों से बाहर तो निकली नहीं हैं। हमें युद्ध का कोई अनुभव नहीं है। इसलिए वहीं बुर्ज की आड़ में खड़े रहना अच्छा है।"

राजकुमारी चुपचाप खड़ी रही। मदन और फतहसिंह चले गये।

× × ×

कारागार में गुलाबसिंह का बुरा हाल था। बेड़ियो में जकड़ा हुआ वह शेर मुक्त होने के तड़प रहा था। तूर्यघोष, शंखनाद, तोपों के धड़ाके और रणभेरी का सिंधु राग सुन कर वह उन्मत्त हो गया। उसे निश्चय हो गया कि मुसलमानों ने हमला किया है और भयंकर युद्ध हो रहा है। मातृभूमि के लिये बलिदान होने के संस्कार उस के अन्तः स्थल में ज़ोर लगा रहे थे। अपने बन्दी साथियों को एकत्रित कर वह बोला—"भाइयो, शत्रुओं ने हमारी मातृभूमि पर आक्रमण किया है। खेद है कि इस संकट की स्थिति में हमें मुक्त नहीं किया गया किन्तु देश के लिए मर मिटने से हमें कौन रोक सकता है। आज हमारे पुरुषार्थ की परीक्षा है। यदि हम यहीं पड़े रहे तो बिना मौत मारे जायेंगे। शत्रुओं के भाले हमारी छाती फोड़ देंगे और हमारे सिर काट काट कर दुर्ग की दीवारों पर लटकाये जायेंगे। इसलिए चलो वीरो, हम सब मिल कर इस कारागार का द्वार तोड़ दें। एकता में बल है। आज हमारी टक्कर कोई नहीं झेल सकेगा।"

कैदियों में "चलो चलो" की आवाज गूँज उठी और कारागार

में पड़ी लकड़ियाँ और लट्ठे जुटा कर उन्होंने एक साथ दरवाजे के ठेस लगाई। द्वार चरमराने लगा। गुलाबसिंह भीतर से चिल्लाया—"दरवाजा खोल दो वर्ना हम इसे तोड़ देंगे।" दो तीन ठेस फिर लगाई गईं। इतने में मदनसिंह, फतहसिंह और उस के सैनिक वहाँ आ पहुँचे।

मदन ने कहा—"दरवाजा खोल क्यों नहीं देते? अब क्यों इन्हें पकड़ रक्खा है? स्त्रियाँ तो जल कर मर गईं। इन गरीबों को क्यों परेशान करते हो?" अध्यक्ष ने द्वार खोल दिया।

"हर हर महादेव" की ध्वनि के साथ बन्दी बाहर आ गये। मदनसिंह को देखते ही गुलाब उस के गले चिपट गया। कैदियो की वेड़ियाँ कटने लगीं। गुलाब ने पूछा—"राजकुमारी का क्या हाल है मदन?"

मदनसिंह ने रोनी सूरत वना ली। लम्बी साँस ले कर वोला—"अव क्या रक्खा है भाई। सर्वनाश हो गया। काश तुम जल्दी आते गुलाव!"

गुलावसिंह की आँखों के आगे अँधेरा छा गया। धम से ज़मीन पर वैठ गया। उसे अपने शरीर की सुध न रही। मदनसिंह ने अपने हाथों से उसे सँभालकर कहा—"गुलाब। जो हुआ सो हुआ। यह समय रोने का नहीं है। शत्रु दरवाजे पर खड़ा ललकार रहा है। वीर नायक! यह तलवार सँभालो और उठो। अव देर करने का अवसर नहीं है।"

गुलाव ने सँभल कर कहा—"हाँ, अव मुझे मरने के अतिरिक्त और कुछ नहीं करना है। चलो अच्छा है कि मैं अपने देश की रक्षा के लिए मरूँगा। ये प्राण तो अब वैसे भी नहीं रुक सकते।"

गुलाबसिंह तथा उस के साथियों की बेड़ियाँ कटते ही उन्होंने नारा लगाया "हर हर महादेव"। बन्दियों को शस्त्र दिये गये। वीर नायक नंगी तलवार हाथ में ले कर चलने लगा। उस ने चलते चलते कहा—"भाइयो! तुम सब को मेरे आदेश के अनुसार काम करना होगा। बोलो तुम तैयार हो ?"

"तैयार हैं" एक स्वर से सैनिकों ने कहा।

गुलाबसिंह की छाती फूल उठी। आँखों में चमक आ गई। चेहरा दमदमाने लगा। द्वार की ओर जाते समय उस ने फतहसिंह को पास बुलाकर कहा—" फतहसिंह जी! दुर्गकी दो दीवारें हैं यह तो सब जानते ही हैं किंतु शायद शत्रु सेना परिचित नहीं है। अतः आप अपने पचास सैनिकों सहित सूर्यद्वार पर चले जाइये। वहाँ जा कर दरवाजा खोल दीजिये और बुर्ज के ऊपर सफेद झंडा फहराइये।"

"हैं हैं, यह आप क्या कह रहे है गुलाबसिंह जी ?"

"आप सुनिये तो सही। शत्रु को चतुराई से जीतना है। सफेद झंडा देख कर वे खुशी से फूल जायेंगे और जय नाद करते हुए सूर्य द्वार और तोरण द्वार के बीच में आ जायेंगे। बस यही उन्हें मारने की सब से अच्छी जगह है। यदि हम ने द्वार न खोला तो वे सीढ़ियों द्वारा दुर्ग में इधर उधर से चढ़ आयेंगे और हमारी मार नहीं खा सकेंगे। उन्हें यहीं समाप्त कर देना है। जब उन की सेना अन्दर आ जाये तो भूखे सिंहों की तरह उन पर टूट पड़िये। इधर तोरण द्वार पर मैं उन्हें सँभाल लूँगा। इस प्रकार जब आगे और पीछे उन पर दुहरी मार पड़ेगी तो वे अल्ला अल्ला करते भाग जायेंगे।"

"बिल्कुल ठीक है गुलाबसिंह जी। यदि आप कहें तो मैं उन के भीतर आते ही फाटक बन्द कर दूँ और ताला लगा दूँ

ताकि एक भी बच कर नहीं जाने पाये।"

नायक ने कहा—"नहीं,नहीं, ऐसा भूल कर भी नहीं करिये। उन्हें भागने का अवसर अवश्य दीजिये। यदि वे न भागे तो खिसियानी बिल्ली की तरह हम पर झपटेंगे।"

थोड़ी ही देर में सूर्य द्वार पर श्वेत ध्वजा फहराने लगी। इसे देख कर राजकुमारी बहुत चिन्तित हुई किन्तु जब उस ने तोरण द्वार की बुर्ज से नीचे देखा तो पता चला कि गुलाबसिंह और उस के साथियों ने नंगी तलवारें ले रक्खी हैं। दूसरी ओर से यवन वाहिनी आ रही थी। सफेद झंडा देख कर कर नवाब की खुशी की सीमा न रही। छीतर खाँ उस की चापलूसी करता हुआ बोला—"हजूर मैं पहले ही अर्ज करता था कि, अब क़ले में कौन है जो हमारा मुकाबला करे। फौज सारी कट गई। औरतें जल कर खाक़ हो गईं। मगर हजूर इस क़िले की खूबसूरती और वलन्दगी पर ग़ौर फरमाइये। कितनी मजबूत और वहतरीन इमारत है। हजूर की हकूमत के पाये इस से और बलन्द हो जायेंगे।"

नवाब ने कहा—"हमें खुशी है कि क़लो खुदवखुद दस्त याव हो रहा है। अफसोस सिर्फ इतना ही है छीतर खाँ कि हमें शहज़ादी नहीं मिल सकी। यह वदनसीव क़ौम अपनी हसीन औरतों को ज़िन्दा जला देती है।"

विजय के गर्व में फूले हुए नवाब ने दुर्ग के पास आते ही आदेश दिया—"फौज आगे वढ़े।" सारी सेना भीतर घुस गई। । शत्रु आते ही नायक ने सिंह गर्जना की "हर हर महादेव।", भगवती दुर्गा का आह्वान करता हुआ वह बोला—"देवी चामुण्डा! आज इन की खोपड़ियों से तेरा खप्पर भर दूँगा।" तलवारें बजने लगीं। इस आकस्मिक आक्रमण से मुसलमान

तोबा तोबा कर उठे। दिन भर के युद्ध से थक कर वे चकनाचूर हो गये थे। गुलाबसिंह की तलवार बिजली की तरह तड़पने लगी और लाशों के ढेर गिरने लगे। मदनसिंह उस के अंग-रक्षक का काम करता हुआ लड़ रहा था। उन के सारे साथी दुश्मनों पर पिल पड़े।

"हजूर यहाँ तो बुरे फंसे" छीतर खाँ ने घबरा कर कहा—"दुहरी मार पड़ रही है।" फैय्याज खाँ अपनी फौज को ललकार कर बोला—"बहादर सिपाहियो ! दुश्मनों का सफाया कर डालो। जिस तरह तुम ने पहला जंग जीता उसी तरह दूसरा भी जीत कर दिखाओ। तुम्हारी तादाद बहुत ज्यादा है। पूरी ताक़त के साथ दुश्मनों से भिड़ जाओ।"

यह सुन कर गुलाबसिंह आग बबूला हो गया। उस ने भी अपने साथियों को ललकारा और दुगनी ताक़त से जूझने लगा। उसे प्राणों का मोह न था और वह अपने साथियों से आगे रह कर निर्भीकता से तलवार चला रहा था। उधर तोरण द्वार के ऊपर से बाण वर्षा हो रही थी। जिस के तीर लगता था वही तुरन्त नीचे गिर पड़ता था। शत्रु सेना में पीछे की ओर जो सैनिक थे उन में से दो तीन तीरन्दाज़ बड़ी हैरानी से यह हालत देख रहे थे। उन्हें पता चल गया कि बुर्ज की आड़ ले कर कोई तीर चला रहा है और जमीन पर खड़े-खड़े उसे गिराना असंभव है। तलवारों के वार बचाते हुए वे चुपचाप लुक छिप कर सूर्यद्वार के ऊपर पहुँच गये और निशाना ताकने लगे। राजकुमारी निश्चिंत हो कर तीर चला रही थी। तरकश से तीर खींचने के लिए उस ने ज्यों ही अपने सीधे हाथ को उठा कर पीठ की ओर किया त्योंही एक तीर सीधे हाथ

के नीचे वक्ष के पास आ लगा और छाती फोड़ता हुआ, भीतर घुस गया।

"शाबास बहादुर खाँ! मार दिया साली को" एक तीरन्दाज सूर्य द्वार पर चिल्लाया और अपने दोस्त की पीठ थपथपाने लगा। राजकुमारी चीख मार कर ज़मीन पर बैठ गई। कान्ति ने तीर को हाथ से खींच कर बाहर निकाला। अपनी साड़ी फाड़ कर उस ने घाव पर मजबूत पट्टी बाँध दी और कहा—"राजकुमारी जी। घबराइये नहीं। आप ठीक हो जायेंगी। इस बुर्ज के सहारे बैठ जाइए। मैं अभी कुछ उपचार का प्रबन्ध करती हूँ।"

कमलिनी ने कहा—"मेरी चिन्ता न कर कान्ति। तू बराबर तीर चलाती रह। दूसरी ओर से सावधान रहना।"

दोनों हाथ घाव पर रखे हुए राजकुमारी बुर्ज के सहारे बैठ गई। यदि बाँई ओर तीर लगा होता तो उस के हृदय को फोड़ कर उस ने तुरन्त जीवन-लीला समाप्त कर दी होती। खून बहना बन्द नहीं हुआ और वह अपने लाल हाथों को वक्षःस्थल से लगाए बैठी रही।

तीरन्दाज़ों के नीचे उतरते ही फतहसिंह ने उन पर हाथ साफ किया और अपने सैनिकों सहित शत्रु सेना से बुरी तरह जुट गया। उधर गुलाबसिंह की तलवार उसी तरह चल रही थी। उस का प्रहार, उस की रोक थाम, उस का चंक्रमण और उस का असि-संचालन दर्शनीय था। बात की बात में वह शत्रुओ के जत्थे को काट देता था। शत्रुओं के पैर उखड़ रहे थे। नायक के आगे जाने की किसी की हिम्मत नहीं होती थी। उस के सामने जाना मानो यमराज के सामने जाना था।

इतने में दुश्मनों में से निकलता हुआ अभयसिंह गुलाब के पास आ गथा। मदनसिंह यह देख कर क्रोध से पागल हो गया। वह बोला—"ठहरो गुलाब। इस कुत्ते से मुझे निवट लेने दो। इस की गर्दन मुझे काटनी है।" दोनों एक दूसरे से भिड़ गए। अभयसिंह कुशल योद्धा था और वह मदनसिंह से डरने वाला न था। उस का ध्यान तो दूसरी ओर था। आज भी उस के गले में वही मोतियों का हार पड़ा हुआ था जो वह कान्ति के लिए लाया था। मदनसिंह के वार बचाता हुआ अभयसिंह लड़ते लड़ते गुलाबसिंह की पीठ की ओर आ गया और उस ने अपनी कटार पूरी ताकत से नायक पर फेंकी। पीठ में लगते ही गुलाब के मुँह से आह निकल पड़ी। उस ने बायाँ हाथ पीछे कर के खून से रँगी हुई कटार बाहर खींची और अभयसिंह पर फेंकी किन्तु अभयसिंह कूद कर अलग खड़ा हो गया और चिल्लाया—"विक्रम की मौत का बदला।"

"ठहर जा कुत्ते" कह कर मदनसिंह उस पर बाज़ की तरह झपटा और लपक कर तीन चार प्रहार करने के बाद उस ने अपनी तलवार अभयसिंह के पेट में इतनी जोर से भोंकी कि केवल मूठ बाहर रह गई और शेष तलवार पेट चीरती हुई पीठ में निकल गई। अभयसिंह ज़मीन पर गिर पड़ा। मदन ने झपट कर उस का हार तोड़ा और अपनी जेब के हवाले किया। उसने नायक से कहा-"हिम्मत रखो गुलाबसिंह। घबराओ नहीं। तुम पीछे रहो। मैं सब से आगे लड़ता हूँ। तुम नहीं जानते, राजकुमारी अभी जीवित है। निराश न होना।"

"कमलिनी जीवित है? आह, मदनसिंह यह तुम क्या कह रहे हो?"

"सच कहता हूँ भाई।"

"आह मदन ! यह तुम ने क्या किया। काश तुम ने मुझ से पहले कहा होता।"

"ऐसा न कहो गुलाव। वह समय कहने का न था वर्ना तुम कारागार में ही पड़े रहते। धीरज रक्खो। मैं शत्रुओं को अभी मार भगाता हूँ। तुम पीछे रहो।"

मदन की तलवार आगे आगे चलने लगी। शत्रु सेना इतनी थक चली थी कि मैदान में उस का टिकना कठिन था। लड़ते लड़ते वह जर्जर हो गई। मदन ने अपने साथियों को ललकारा और कहा—"शाबाश वीरो। पूरी ताकत से हमला करो। दुश्मन भाग रहा है। जीत हमारी होगी।"

गागरोन के सैनिकों ने और भी भयंकर मार काट शुरू कर दी। दुश्मनों की हिम्मत पस्त हो गई। नवाब ने कहा—"छीतर खाँ ! हमारी फौज एक दिन में दो जंग नहीं जीत सकती। लड़ने की भी हद होती है। लड़ते लड़ते सारा दिन हो गया। अब यहाँ से चलना मुनासिब है।"

"बेहतर है हज़ूर वर्ना जान के लाले पड़ जायेंगे। इन सूनी दीवारों में क्या रक्खा है। घोड़े की लगाम दरवाज़े की तरफ मोड़िये।"

दोनों ने अपने घोड़े मोड़ कर एड़ लगाई। सूर्यद्वार पर फतहसिंह इन का बच कर निकलना बर्दाश्त नहीं कर सका। तेज़ी से उन की ओर लपक कर बोला—"कहाँ भागते हो गीदड़ो। ज़रा सामने तो आओ।" वह फैय्याज खाँ से लड़ने लगा। किन्तु वह नीचे खड़ा था और वे दोनों घोड़ो पर सवार थे। फैय्याज और फ़तह को लड़ते देख कर छीतर खाँ ने मौके से फतहसिंह की पीठ पर बल्लम मारा और वह सदा के लिए सूर्य द्वार पर लेट गया। नवाब के पीछे उस की सेना भी भाग

गई। युद्ध रुकते ही गुलाबसिंह तोरण द्वार को पकड़ कर बैठ गया। अभयसिंह की कटार से उस के गहरा घाव लगा था।

गुलाबसिंह लम्बी साँस ले कर बोला—"मदन। किसी को जल्दी भेज कर दुर्ग पर केसरिया झंडा फहराओ। मुझे उस के अंतिम दर्शन कर लेने दो।"

"अरे अरे गुलाब ! ऐसा न कहो। हिम्मत रखो।" उस की हालत से मदन का जी भर आया। अपने आँसुओं को बरबस रोक कर उस ने साथियों से कहा—"भाइयो, इन्हें जल्दी से बुर्ज़ पर ले चलो। तुम नहीं जानते, राजकुमारी जी अभी जीवित हैं।"

सैनिकों ने वीर नायक को अपनी बाहुओं में उठा लिया और उसे बुर्ज़ पर ले गये।

"आह कमलिनी, कमलिनी" गुलाब के मुँह से एक चीख निकली। राजकुमारी की सारी देह खून से लथपथ हो चुकी थी। उस ने आँखें खोलीं और कहा—"गुलाब! आ गये। चलो अच्छा हुआ। मैं सुख से मर सकूँगी।"

घाव की वेदना से कमलिनी कराह उठी। गुलाबसिंह ने अपने जख्मी हाथों से उस का सिर अपनी गोद में रख लिया और उस के बालों में हाथ फेरता हुआ बोला—" प्राणप्रिये ! हम जीत गये हैं। वह देखो ! दुर्ग पर केसरिया झंडा फहरा रहा है। अब हम सुख से मर सकेंगे "

कमलिनी ने फिर आँखे खोलीं और कहा— "धन्य भाग। आज मेरी सब इच्छायें पूरी हो गईं।"

कान्ति ज़ोर से रोने लगी। राजकुमारी का ध्यान उस की ओर गया और उसने उसे पास आने का संकेत किया। इसी प्रकार उस ने मदनसिंह को बुलाया और कहा—" मदनसिंह। मेरी

प्यारी सहेली को मैं तुम्हें सौंप रही हूँ। इस को अच्छी तरह रखना।"

मदन और कान्ति-दोनों के आँसू गिर रहे थे। गुलाबसिंह ने देखा कि दीपक की लौ अंतिम बार जल रही थी। उस ने कमलिनी को अपनी बाहुओ में भर लिया और उस का चुम्बन किया। कमलिनी के अधर हिले और उस ने कहा—"प्राणनाथ। मैं चली। अब स्वर्ग में मिलेंगे" एक लम्बी साँस के साथ उस की आत्मा चली गई और उसका सिर गुलाब के हाथों में झुक गया। कमलिनी ! तुम चली गई। ठहरो, मैं भी आता हूँ।" वह अपने शिथिल हाथों को राजकुमारी की मृत देह पर फेरने लगा।

मदनसिंह फूट फूट कर रो रहा था। "भैया गुलाब" उस ने प्रलाप करते हुए कहा—"तुम्हारे प्रेम को मैं कभी नहीं भूल सकता। तुम अमर हो। तुम्हारा प्रेम अमर है" कह कर उस ने अपने मित्र का सिर गोद में ले लिया और उस के आँसुओं की धारा बहने लगी। गुलाब ने कहा—"अच्छा मदन ! मैं भी जाता हूँ। यह दुर्ग राजकुमार महेन्द्र को सौंप देना और कह देना कि गुलाबसिंह ने अपना कर्त्तव्य पूरा किया। तुम उन के प्रधान मंत्री रहोगे। अच्छा, प्रणाम। मेरे वीर साथियो, तुम सब को प्रणाम। केसरिया झंडे को प्रणाम। कान्ति और मदन सुखी रहना।"

वीर नायक ने राजकुमारी की मृत देह को अपने अंक में भर लिया और बोला—"कमलिनी ! प्राणप्रिये ! ठहरो, मैं भी आता हूँ।"

× × ×

सूर्यद्वार बन्द हो गया। उसी बुर्ज पर एक चन्दन की चिता

बनाई गई जिस पर गुलाब और कमलिनी के शरीर रखे गये। अपने आँसू पोंछते हुए मदनसिंह ने दोनों को प्रणाम किया और चिता में आग लगा दी। उसी बुर्ज पर एक संगमरमर का चबूतरा बनाया गया जिस पर एक छोटी सी श्वेत समाधि बनी और वहाँ कमलिनी और गुलाब की सुन्दर मूर्तियाँ स्थापित की गईं। प्रतिदिन प्रातः काल उठ कर मदन और कान्ति उन दिवंगत प्रेमियों की पवित्र समाधि पर आजीवन पुष्प चढ़ाते रहे।

★

परिचय

संध्या का समय था। गोमती के किनारे अनेक व्यक्ति सैर कर रहे थे। हम चार पाँच साथी एक ओर घूम रहे थे। कभी छतर मंजिल की ओर नज़र जाती थी—कभी गोमती की लहरों की ओर—कभी आने जाने वालों की ओर। छतर मंजिल के बड़े बड़े श्वेत विद्युत् दीप खूब चमक रहे थे। गोमती में उन का प्रतिबिम्ब काफी दूर तक झिलमिला रहा था। हमारे साथ दो युवतियाँ भी थीं। बात करते करते एक साथी ने कहा—"भाई, लखनऊ में घूमते घूमते जी भर गया। अब तो जी चाहता है कि किसी वीरान खण्डहर में जा कर कुछ दिन गुज़ार दूं।"

एक युवती चंचल थी। विनोद का अवसर ढूंढ रही थी। मेरी ओर संकेत कर बोली—"दीपक जी। राजस्थान से अधिक वीरानगी और कहाँ मिलेगी। राजस्थान और रेगिस्तान शब्द कितने मिलते जुलते हैं।"

मैंने लम्बी साँस खींच कर कहा—"जी हाँ। पहले तो चल कर मेरी हवेली ही देख लीजिये। पहले वहाँ जितने घोड़े बँ थे, वे स्थान अब खाली पड़े हैं। आप सब चलेंगे तो कुछ दिन रौनक़ रहेगी।"

"यानी यूं कहिये कि आप का दौलतख़ाना एक अस्तबल के नज़दीक है" लड़की ने कहा।

मैंने कहा—"जी नहीं। आप राजपूतों की हवेलियों को क्या अस्तबल समझती हैं? आप कभी लखनऊ से बाहर भी गई हैं या नहीं? राजस्थान के ऊँचे ऊँचे महलों और बड़े बड़े किलों को देख कर आप इस छतर मंजिल पर हँसने लगेंगी।"

एक मित्र बोला—"अच्छा। यदि ऐसा है तो अब की बार दशहरे पर यही प्रोग्राम रहेगा। पढ़ाई तो भगवान् की दया से होती ही रहती है। ऐसा अवसर फिर कब आयेगा।"

दूसरी युवती गम्भीर थी। बोली—"मैं तो अपने भाई के